वीरचूडामणि।

लेखक
अखौरी कृष्णप्रकाशसिंह,
बी० ए०, एल० एल० बी०

वीर चूड़ामणि ।

ऐतिहासिक उपन्यास ।

शान्ति-सुख, नेलसन, धीर पतिव्रता, मर्य्यादा-
पुरुषोत्तम श्रीराम, श्रान्तपथिक इत्यादि के
लेखक, "सुलेखक स्वर्ण पदक" प्राप्त,
औरंगाबाद (गया) निवासी

अखौरी कृष्णप्रकाश सिंह बी० ए०

लिखित ।

हरिदास एण्ड कम्पनी,

द्वारा प्रकाशित ।

कलकत्ता

२०१, हरिसन रोड के "नरसिंह प्रेस" में,

बाबू रामप्रताप भार्गव द्वारा

मुद्रित ।

अकतूबर सन् १९२१ ई०

द्वितीय बार २०००] [मूल्य ॥)

अखौरी आनन्दप्रकाश सिंहजी ।

प्यारे भाई !

यह तुम्हारे भैयाकी बैठेकी बेगारी है, तुम इसे मौरनिङ्ग स्कूलसे स्लेट कापी लिए, थके माँदे आने-पर भी बड़े चावसे सुना करते थे । तुम इसे चाहते थे, इसलिए इसे ले लो ; हँसो, खेलो ; मैं तुम्हें प्रसन्न देख प्रसन्न हूँगा ।

तुम्हारा

भैया ।
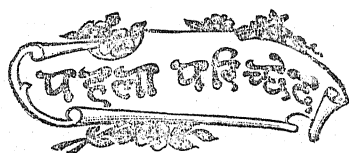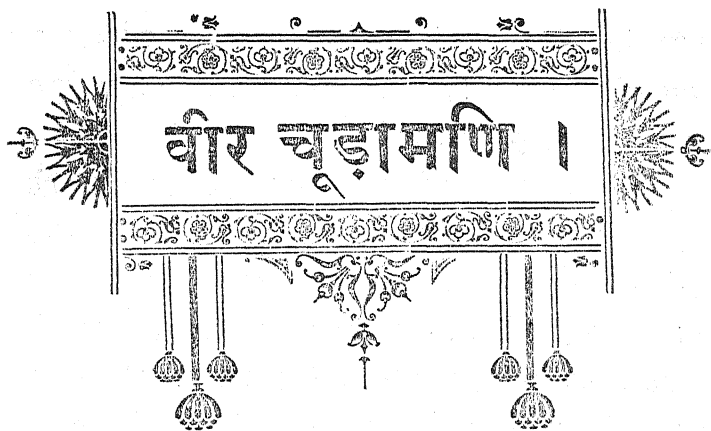
The Path of Duty is the way to Glory.

Tenny.

चितौड़के पहाड़ी स्थानोंमें, वर्षा-कालके समय, प्रकृति भयङ्कर रूप धारण करती है। सन् १२७३के वर्षाकालमें, सायंकालके समय, वह घोर घटा और भीषण सौन्दर्य्य मानो दशगुणी वृद्धिको प्राप्त हुआ है। सूर्य्य भगवान् अभी अस्त नहीं हुए हैं, तोभी समस्त आकाश बड़े-बड़े मेघोंसे ढक रहा है और चारों ओरसे पर्वत-श्रेणी और अनन्त वन निविड़ अन्धकारसे आच्छादित हो रहे हैं

पर्वत, वन, मैदान, तराई, दरीचे, आकाश और वृक्षोंमें शब्द मात्र नहीं ; मानों जगत्, शीघ्र ही प्रचण्ड प्रलय आता हुआ जान, भयसे व्याकुल हो गया है।

निकटस्थ पर्वतोंके आने-जानेके मार्ग कुछ एक दृष्टि आते हैं। दूरके पेड़ोंसे ढके हुए भूधर केवल अति काले जान पड़ते हैं और पर्वतोंकी तलैटियोंमें महा भयङ्कर अन्धकार छा रहा है। बहती हुई छोटी-छोटी नादयाँ, कहीं तो चाँदीके गुच्छों के समान देख पड़ती हैं और कहीं अन्धकारमें लीन होकर शब्दमात्रसे ही अपना परिचय दे रही हैं। उसी पहाड़ी मार्गमें केवल एक अश्वारोही जा रहा है। घोड़े का समस्त शरीर खेदपूर्ण और धूपसे तप रहा है। अश्वारोही के शरीर पर भी धूल और कीचड़ पड़ी है। देखनेसे ज्ञात होता है कि, वह बहुत दूरसे चला आता है। उसके हाथमें बर्छा, म्यानमें खड्ग और बायें हाथमें घोड़े की लगाम और बायें ही कन्धेपर ढाल है !

शरीर उज्ज्वल और लोहेके बख़्तरसे ढका है। पहनावा और पगड़ी राजपूतोंके समान है।

अश्वारोही की उम्र क़रीब अठारह वा उन्नीस वर्ष की है ; उसका शरीर ऊँचा और वर्ण गौर है; किन्तु परिश्रम या धूपसे उसके मुखका उज्ज्वल वर्ण कुछ श्याम होगया है ! युवक का ललाट ऊँचा और दोनों नेत्र ज्योतिःपूर्ण हैं। मुखमण्डल उदारताके साथ आतशय तेजःपूर्ण है। अश्वको कुछ देर विश्राम

देनेके निमित्त युवक उसपरसे कूद पड़ा। लगाम वृक्षपर फेंक, बर्छा वृक्षकी शाखामें अटका दिया। हाथसे माथेका पसीना पोंछकर, निविड़ काले-काले बालोंको उन्नत ललाटपर पीछे डालकर, कुछ देर आकाशकी ओर देखता रहा। आकाश का आकार अति भयङ्कर है। अभी-अभी बड़ी आँधी आवेगी, इसमें संशय नहीं। मन्द–मन्द वायु चलनी आरम्भ हुई है। अनन्त पर्वत और वृक्ष-लताओंसे गंभीर शब्द हो रहा है और कभी मेघोंका गर्जन भी सुनाई पड़ता है। युवकके सूखे अधरों पर दो एक बूँद वृष्टिका जल भी गिरा। यह जानेका समय नहीं। जब तक आकाश स्वच्छ न हो जाय, तब तक कहीं ठहरना उचित है। परन्तु युवकको यह चिन्ता करने का अवसर नहीं है। वह अपने पिताके वचनोंको मानने और देशकी रक्षाका बीड़ा उठाये हुए था। वह फिर हाथमें बर्छा लेकर कूदकर घोड़े पर सवार होगया। उसकी तलवार घोड़े पर चढ़नेसे झनभन करने लगी। युवकने एक क्षण तक आकाशकी ओर देखा; फिर तीरके समान वेगसे घोड़ा दौड़ा कर उस निःशब्द पर्वत-देशमें निद्रित प्रतिध्वनिको जगानेके लिये चलने लगा। थोड़ी ही देर बाद, भयानक आँधी चलनी आरम्भ हुई। आकाशके एक छोरसे दूसरे छोर तक दामिनी दमकने लगी और मेघका गर्जन उस अनन्त मैदानमें शत-शत बार शब्दायमान होने लगा। इस समय करोड़ों राक्षसोंके बलकी निन्दा करनेवाला पवन, भीषण साँय-साँयका शब्द करता हुआ

चलने लगा, मानो अनन्त पर्वतोंको जड़से कँपाने लगा। बार-बार पर्वतोंपर खड़े शत-शत वृक्षोंसे कर्णभेदी शब्द होने लगे। झरने और तरङ्गिणियोंका जल उफन उफनकर चारों ओर फैलने लगा। क्षण-क्षणमें बिजलीके चमकनेसे बहुत दूर तक यह स्वाभाविक विप्लव दिखाई देने लगा। बीच-बीचमें बादलों का गर्जना, तो जगत्को और भी कम्पित करता और बल-बलाये देता था।

वृष्टिने मूसलधारसे गिर कर पर्वत और वन तलेटियों को जलमय कर झरने और नदियोंको उफना दिया।

वह अश्वारोही, किसीसे न रुककर, वेगसे चलने लगा। कभी बोध होता था, कि अश्व और अश्वारोही वायु वेग से पर्वतके नीचे गिरेंगे। कभी छलाँग मार अन्धकारमें जल-स्रोत पार होते समय, दोनों ही उन कठिन पत्थरोंके उपर गिर पड़ते थे।

एक स्थानमें वायुपीड़ित वृक्षशाखाके आघातसे अश्वा-रोहीको पगड़ी छिन्न-भिन्न हुई और उसके माथेसे दो एक बूँद रुधिर भी गिरने लगा; किन्तु जिस व्रतमें वह व्रती था, उसमें विलम्ब करना असम्भव था।

बस, युवकने पलभर भी चिन्ता न की; वरन् जहाँ तक सम्भव हो सका, सावधानीसे अश्व चलाने लगा। तीन-चार घड़ी मूसलधार वृष्टि होनेके उपरान्त आकाश निर्मल हो चला। वृष्टि भी थम गयी। अस्ताचलचूड़ावलम्बी सूर्यके

प्रकाशसे उन पर्वतोंकी तथा वर्षासे भीगे हुए वृक्षसमूहकी चमत्कारिणी शोभा दृष्टि आई।

युवक चितोड़के समीप पहुँचकर रुका और अपने बिखरे हुए बालोंको सुन्दर, चौड़े ललाटसे हटाकर, उसने नीचेकी ओर दृष्टि की। अहा! क्या अनुपम शोभा है! पहाड़ों पर पहाड़, जहाँ तक दृष्टि पहुँचती है, दो-तीन हज़ार ऊँचे शिखर बराबर दिखाई देते हैं, उस पर्वतश्रेणीके पार्श्वमें चारों ओर नहाये हरे रङ्गके अनन्त वृक्ष सूर्य्यके प्रकाशसे अनन्त शोभा धारण कर रहे हैं—बीच-बीचमें झरने सौगुणे बढ़ कर एक श्रृङ्गसे दूसरे श्रृङ्ग तक नृत्य कर रहे हैं।

प्रति पर्वत-शिखरके ऊपर सूर्य्यकी किरणोंने अनेक रूप धारण किये हैं। जगह-जगह, झरनों पर इन्द्रधनुष नाना प्रकारके रंगोंसे रँग रहे हैं और बहुत दूरतक की मेघ-मण्डली वायुसे पीड़ित हो वृष्टिरूपसे गल रही है।

युवक क्षणभर इस शोभासे मुग्ध हुआ, फिर सूर्य्यको देखकर शीघ्र दुर्गके निकट पहुँचा।

द्वारके भीतर प्रवेश कर युवकने देखा, कि सूर्य्य भगवान् अस्त होरहे हैं। युवकने जैसे ही दुर्गमें प्रवेश किया कि, झन–झन शब्द करके क़िले का द्वार बन्द हो गया।

द्वार-रक्षकोंने द्वार बन्द करके युवकको प्रणाम किया और कहने लगे, "आप अधिक विलम्बसे आये, जो क्षणभर और विलम्ब होता, तो आजकी रात कोटके बाहरही बितानी पड़ती।"

युवक—(हँस कर) भला हुआ जो एक मुहूर्त्त का विलम्ब न हुआ। भगवान् एकलिङ्गके प्रसादसे जो प्रतिज्ञा पिताजीके निकट की है, उसका पालन किया। मैं अभी पिताजीके निकट जा, समाचार सुनाना चाहता हूँ, तुममें से एक बढ़ कर समाचार दे दो।

एक रक्षक—कुमारजी! महाराणा आपकी ही बाट जोह रहे हैं।

"अच्छा तो मैं जाता हूँ"—यह कह कर युवकने राजगृह की ओर प्रस्थान किया। अनुनति पाकर युवक महाराणाके महलमें गया और सिर नवा कर खड़ा हो गया।

महाराणाने प्रेमसे उठकर युवक को गले लगाते हुए कहा, "चूड़ाजी! कहो, क्या समाचार लाये?"

पाठक! जान लेवें कि, हमारे पूर्वपरिचित युवक का नाम चूड़ामणि है। इन्हींके वंशज चूड़ावत नामसे प्रसिद्ध हैं।

चूड़ा—पिताजी! मैं यहाँसे सीधा 'वैराटगढ़' को गया। वहाँ का पूरा-पूरा हाल जाना। वहाँके दुष्ट भील सब व्यापारियों को लूटते और डकैतीका काम करते हैं। ये ग्रामोंको जला देते हैं। दादाजी, महाराणा हम्मीरसिंह, के पराक्रमसे भयभीत हुए, ये पहाड़ी राक्षस बिगड़से गये हैं। इनको सीधे मार्गपर लाना, हमलोगों का धर्म्म है।

पाठक! आप सोचते होंगे कि, ऐसे तुच्छ कार्य्यके लिये राजकुमार क्यों गये? क्या चित्तौड़में कोई ऐसा मनुष्य नहीं

था, जो इस कार्य्यको करता ? पर ज़रा और सब्र कर देखें ; आप ही सारा भेद मालूम हुआ जाता है।

महाराणा—पुत्र! मेरी नसोंमें बिजली दौड़ रही है। हा! मेरे रहते मेरी प्रजाको इतना दुःख हो और मैं हाथपर हाथ दे मौन रहूँ! ऐसा कदापि नहीं हो सकता। पुत्र! क्या सीसोदिया महाराणा हम्मीरसिंहके उन पराक्रमके कार्य्योंको और उनके वीरताभरे वचनोंको भूल गये ?

"नहीं, नहीं, कदापि नहीं। हम्मीरसिंहके स्वदेश-भक्तिके चित्त-भेदक वचन अभी उनके अन्त:करणमें बिंधे हुए हैं,"—यह कहता हुआ एक राजपूत, जिसका पहनावा, गौराङ्ग बदन और ललाट पर का त्रिपुण्ड कहे देता था कि, वह अवश्य भारी पदाधिकारी है—भीतर आया। महाराणा कहने लगे,—"कृष्णसिंह! आओ, आओ, बैठो ; तुम्हारे परामर्शकी भी ज़रूरत है ; क्योंकि सीसोदिया वीर केवल मरना-मारना जानते हैं ; पर तुम उनके भी सेनापति हो। तुमको याद होगा कि, उस दिन मुझे एक गुमनाम पत्र मिला था, जिसका सारांश यह था :—

"श्रीमहाराणाजीके चरणोंमें,

"मैं आपके दासोंमेंसे हूँ ; अतः मैं श्रीमान्‌को एक समाचार देना उचित समझता हूँ। पहले मुझे महाराणाजीकी ओरसे क्षमा मिले; क्योंकि जब मैं लिखने बैठा हूँ, तो अवश्य कुछ लिखूँगा।

"जिस राजाके राज्यमें प्रजा दुःखी रहती है, वह अवश्य पापका भागी होता है। महाराज! आप वीर हैं, इसलिए

मैं निवेदन करता हूँ, कि आप इस पत्रको पढ़कर अवश्य कुछ कार्य्य कर जगत्‌में यश लूटें; क्योंकि कहा है कि "बलेन किं यश्च रिपू न्न बाधते।" अतः बल पाकर अवश्य दीनोंकी रक्षा करनी चाहिए। आपके राजके उत्तरमें जो वैराटगढ़ का क़िला है, वह डाकुओंका मुख्य अड्डा है। वहींसे सब डकैत उतरकर व्यापारियोंको लूटते और दुःख देते हैं—आपसे वीरके राज्यमें ऐसा अत्याचार होना ठीक नहीं!

"हा! क्या हम्मीरके मरते ही चित्तौड़की वीरवधुओंने वीर-पुत्रोंका प्रसवना ही छोड़ दिया? हा! क्या सब धर्म्म एकबार ही लोप हो गया! महाराणा! यदि मातृभूमिके उद्धार करनेकी अभिलाषा है तो धर्म्मकी ओर ध्यान देकर इन बिचारे निरपराध व्यापारियोंकी रक्षा करें।

"महाराज!

करहु धर्म्मसे नेह, भारतकी सम्पद तनहु।
धरहु न मन संदेह, भारत जननी आपकी॥

आपका—

एक सेवक।"

"देखो, प्यारे कृष्णसिंह! मैं कब इस पत्रको पढ़कर चुप रह सकता था? परन्तु मैं केवल एक गुमनाम पत्र पर उन भीलोंको छेड़ना भी उचित नहीं समझता था, जिनके द्वारा मेवाड़की रक्षा कई वार हो चुकी है।

"इन्हीं कारणोंसे इस गुरु कार्य्यका भार कुमारको सौंपना

पड़ा। मैंने यह भी कह दिया था, कि आज यदि ये और नहीं आये, तो कल ही लड़ाई छेड़ दी जायगी!"

कृष्ण०—ठीक है, यदि आज्ञा हो तो यह दास भी कुछ कहे।

महाराणा—अवश्य, अवश्य कहो।

कृष्ण०—यदि एक पत्र लिखकर भिल्लराज वीरभद्रसे पूछ लिया जाय कि, वह ऐसा क्यों करता है, तो अच्छा हो। यदि उत्तर यथोचित मिल गया, तो वृथा कष्ट काहेको उठाया जाय? नहीं तो फिर उनका गर्व-खर्व करना ही धर्म्म है!

महाराणा—अच्छा तो इसका भार तुम पर रहा।

कृष्ण०—अच्छा, महाराज! अब मैं विदा होता हूँ। कल पुनः यथोचित उत्तरके साथ दर्शन करूँगा।

महाराणा, कृष्णसिंहको बिदा कर चूड़ाजीके साथ भोजनको उठ गए।

War didn't please his heart.
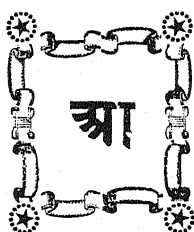
आज क्या है ? चारों ओर जिधर देखो, उधर ही कहीं सेनाका सैन्यक्रम, कहो अश्वारोहियोंका जमघट, कहीं सैनिकदल की व्याकुलता, कहीं लोगोंका इधर-उधर फैलना ? आज दर्बार-ए-आम खचाखच भरा है। तिल धरनेको जगह नहीं है। दर्बारके बीचोंबीचमें एक उच्च सिंहासन पर महाराणा लाखा बैठे हैं। उनकी दोनों ओर चाँदी सोनेकी कुर्सियों पर सभासद गण बैठे हैं। सारे दर्बारमें सन्नाटा छाया हुआ है। कोई बात भी नहीं करता।

बहुत देरके बाद, महाराजने कृष्णसिंह से, जो निकट ही एक कुर्सीपर बैठे थे, कहा, "कृष्ण ! उस पत्रको पढ़ो तो, जो वीरभद्रने भेजा है।"

कृष्ण, खड़े होकर इस भाँति पढ़ने लगे :—

"महाराज ! कहीं सिंहसे भी सिंह डरा है ? आपका पत्र पाया। आप लिखते हैं कि, तुम्हारे लोग हमारे राज्यमें उपद्रव मचाते हैं ; इसलिये उन लोगोंको रोको, नहीं तो युद्ध करो।

"क्या महाराजको मालूम नहीं है कि, भीलोंका बाण सात तह लोहेकी चद्दर छेद सकता है। इसलिये आपसे जो

कुछ करते बने, कर लेवें; केवल गीदड़ भभकीसे वीर भीलगण डरने वाले नहीं हैं।"

आपका—

वीरभद्र।"

इस पत्रको सुनते ही समूची सभामें खलबली सो पड़ गई और चूड़ाजी उठे और कहने लगे :—

"भाइयो! इन भीलोंको तो अवश्य दबानाही पड़ेगा। लेकिन सीसोदिये भी ऐसे मूर्ख नहीं हैं कि, ऐसे समयको हाथसे जाने दें और कीर्त्तिको खो देवें। (बेशक! बेशक! की आवाज़-से चारों ओर हल्ला मच गया) अभीतक हमारे सीसोदिये वीर चाहे कैसाही प्रबल शत्रु क्यों न हो, उसको दबा सकनेकी सामर्थ्य रखते हैं। इनके नये राणाभी इन्हें ऐसे ही मिले हैं। अपनी प्रजाके व्यापारके लुटनेको वे अपनी प्रतिष्ठा का लुटना समझते हैं।"

"राजकुमारकी जय! एकलिङ्ग की जय! हमलोग भीलों को अभी मटियामेट करनेको प्रस्तुत हैं। हमलोग अपने पूज्य महाराणाकी शपथ करते हैं।"

महाराणा—कृष्णसिंह! सेना-सज्जित करनेकी आज्ञा दो। कल चढ़ाई की जायगी। मैंने उन भीलोंके नाशका अटल संकल्प चित्तमें ठान लिया है।

पाठक, राणा लाखाके शान्त स्वभावसे ही सीसोदिया वीर शान्त हो रहे थे, परन्तु जब कोई उन्हें छेड़ता था, तो वे

उसके विनाशमें भी देर लगानेवाले नहीं थे। ज्योंही राणाजीने मेवाड़ के पहाड़ी भीलोंके नाशका सङ्कल्प उनके सामने प्रकाशित किया, त्योंही मेवाड़ी सिंह गर्जकर उठ खड़े हुए।

केवल आज्ञाकी देरी थी। प्रातःकाल होते ही अस्सी सहस्र सेना आ एकत्रित हुई। हिनहिनाते हुए अश्वोंपर वीर राजपूत भाला, तलवार, कटारी, तीर और कमान आदिसे सजकर चित्तौड़के मैदानमें एकत्र हो राणाकी राह देखने लगे।

इतनेमें राणाजी शस्त्रोंसे सुसज्जित हो घोड़ा कुदाते सेनामें आ मिले। चूड़ाजी भी उसी भेषमें पीछे-पीछे घोड़ेपर सवार थे।

ज्योंही राणाजी उपस्थित हुए, त्यों ही वीरोंने जय जयकी ध्वनि की।

कृष्णसिंहने बढ़कर पूछा—"क्या महाराज कुमार भी परिश्रम करेंगे ?

चूड़ा—अवश्य, मैं अपनी हस्तलाघवताका परिचय, इन्हीं भीलोंके सिरोंको काटकर दूँगा।

पुनः सेनासे ध्वनि उठी—"कुमारकी जय।"

सब प्रकारके सैनिक बाजे बजने लगे। भाट और चारण शूरता भरी कविताओंसे वीरोंका उत्साह सौगुणा बढ़ाने लगे। वीरोंकी कौन कहे, कायर भी इन कविताओंको सुनकर फड़क उठते थे।

राणाजी, जो घोड़ेकी पीठपर शान्त बैठे थे, बोल उठे ;—

"मेरे शूर-सामन्तो और सीसोदिये वीरो ! लड़ाईके समय कैसी वीरता दिखानी उचित है, शत्रुओंसे कैसा व्यवहार करना चाहिये और संग्राममें राजपूतोंका क्या धर्म है, इन बातोंकी शिक्षाकी कुछ आवश्यकता नहीं, क्योंकि तुम इस विद्यामें स्वयं पारङ्गत हो।

"मेवाड़के राजपूतो ! तुमने आजतक पराक्रमके बड़े-बड़े काम किये हैं। सदा अपने शत्रुओंका शिर नवाते रहे हो और कीर्त्ति पाते रहे हो। वैसी ही कीर्त्ति आज भी अपने शत्रुओं को परास्त करके पाओ, इसीलिये तुम्हें यहाँ बुलाया है।

"हम लोगोंको चाहिये कि, जो हमारे मनुष्योंको पीड़ा देते हैं, उनके माल मतेको लूटते हैं और जिनके भयसे निर्बल, बालक, बूढ़े, किसान तथा व्यापारी लोग हाहाकार मचाते हुए चित्तौड़में अपनी दुःख-गाथा सुनाने आते हैं, उन्हें ऐसा मार भगाओ कि, वे फिर सिर न उठावे।"

ये शब्द सुनते ही सम्पूर्ण मेवाड़ी राजपूतसिंह गर्ज उठे। सर्वत्र जय-जयकार का शब्द होने लगा। समरोन्मुख सेनाके विचार पूर्वक चार विभाग करके चार दिशाओंमें बाँट दिये गये। मुख्य भाग राणाजीके साथ शत्रुओंके सामने चला। दूसरा चूड़ाजीके साथ, तीसरा कृष्णसिंहके साथ, चौथा माधवसिंहके अधिकारमें चला।

किसी स्थानमें पहाड़ियोंने शूर सीसोदियोंका सामना नहीं किया; बल्कि हटते-हटते अपने मुख्य नगर वैराटगढ़में जा

छिपे। सीसोदिये बाहर डेरा डालकर पड़े रहे। परन्तु चूड़ाजी की साथवाली सेना वनमें इधर-उधर फिरती रही।

एक रातको चूड़ाजीके सहयोगियोंने सलाह की कि, आज किसी भाँति गढ़पर चढ़ कर फाटक खोल देना चाहिये।

बात करनेको देर थी, कि चूड़ाजी तुरन्त सहमत होगये। यह भी निश्चय हुआ कि, राजकुमार ही हरावलके अध्यक्ष बनें। बस, बीस सहस्र वीर राजपूत सेना चुपचाप अन्धकार-मयी रात्रिमें दुर्गकी ओर बढ़ने लगी। बहुत दूर निकल जाने पर जो देखा, तो मार्ग और विकट पाया। बड़ी कठिन समस्या! बहुत दूर निकल आये; यदि फिर नीचे उतर, दूसरे मार्गसे चलते हैं, तो दुर्गपर पहुँचनेके प्रथम ही प्रभात हो जाता है। "हे ईश्वर! आगे आनेकी लज्जा रखना"—कुमार यही सोचते हुए कुछ देरतक मौन रहे। फिर अपने मित्र नारा-यणसिंहको बुला, अति धीरे-धीरे कुछ कहा। नारायणसिंह चले गये। कुमार क्षणभर खड़े बहार देखते रहे। इनकी सेना अलग खड़ी-खड़ी दूसरी आज्ञाके लिये उत्सुक हो रही थी। आध घड़ी पीछे नारायणसिंह लौट आये। उनके शरीरसे पसीना टपक रहा था। शरीर और कपड़े कीचड़के छीटोंसे भरे थे। आते ही कुमारके कानमें अति मृदु स्वरसे कुछ कहा। जिसे सुनकर कुमार कुछ लम्बी साँस लेकर बोले, "अच्छा, ऐसाही हो; क्योंकि अब कोई दूसरा उपाय नहीं है।"

सेनापतियोंकी ओर फिर कर कुमारने आगे बढ़नेकी आज्ञा दी। नारायणसिंह मार्ग दिखलाते हुए आगे चले।

पानी बरसनेसे एक स्थान पर पत्थर टूट कर नाली सी बन गयी थी ; उसके दोनों किनारे ऊँचे और बीचमें गहराई अधिक हो गयी थी।

बरसातमें गंभीर नाली पानीसे भर जाती है ; अभीतक इसमें जल है, इस जल-मार्गसे जाने और दोनों किनारोंके ऊँचा होनेके कारण कदाचित् शत्रु न देख सकें, यह परामर्श निश्चय हुआ। समस्त सेना धीरे-धीरे उसी नालेकी ओटमें होकर पर्वतपर चढ़ने लगी।

सैकड़ों छोटी-छोटी निर्भरणियोंका जल शिलाओंके ऊपर गिर कर घोर शब्दके साथ नीचे बह रहा था। इन्हीं शिलाखण्डोंके ऊपर पानीको लाँघती हुई २० सहस्र सेना पहाड़ी पर चढ़ने लगी।

यह वीरवाहिनी बहुत शीघ्र ऊपरी वृक्षोंके झुरमुटमें पहुँच गई। यहाँ पहुँच कुमारने भवानीको धन्यवाद दिया। अभी ये निश्चिन्त भी न होने पाये थे कि, सहसा एक तीरकी फरफराहट सुनाई पड़ी और साथ ही एक सिपाही धमसे वहीं गिर पड़ा। सब सेना सचेत हो गई। नारायणसिंहने कहा, "कुमार! मालूम होता है कि शत्रुओंको ख़बर हो गई। इस लिये आज लौट चलें, कल देखा जायगा।"

पाठक! यह कब होने वाला था, चूड़ाजीका साहस और

बल विपद्में सहस्र गुणा बढ़ जाता था। कुमारने बड़े गर्व से कहा, "मित्र! आज मैं प्रण करके आया हूँ कि दुर्ग-दखल करूंगा वा प्राण दूँगा।"

कुमारको एक युक्ति सूझी। उन्होंने एक सहस्र सेनाको दुर्गकी दूसरी ओर कोलाहल करनेकी आज्ञा दी। एक घड़ीमें दुर्गकी दूसरी ओर कोलाहल होने लगा। भीलोंने तत्काल मशालें जला दीं।

कठिन समरका सामना है। चूड़ाजी राजपूतोंसे गर्ज कर बोले, "भाइयो! अपनी वीरताका परिचय दो, चूड़ाजीका नाम रक्खो। नारायणसिंह आज बाल्यकालकी मित्रता निबाहो।"

चूड़ाजीके वचनोंने अग्निमें घृतका काम किया। सैनिकोंका हृदय साहससे परिपूर्ण होगया। इधरके गंभीर अन्धकारमें वे सब चुपचाप आगे बढ़े और तत्काल दुर्ग-प्राचीरके निकट पहुँच गये।

इस समय आधी रात होगई थी। न आकाशमें प्रकाशही था, न दुर्गके इस भागमें कुछ शब्द ही था। हाँ! पर्वतों और वृक्षोंके बीचमें 'हर-हर' शब्द करती हुई वायु अवश्य बह रही थी।

तीसरा परिच्छेद

Their own imaginations they deceive.

वे राटगढ़के कोटकी दूसरी ओरकी भीतसे चूड़ाजी अभी पचास हाथ दूर हैं। इतनेमें उनका दृष्टि प्राचीरके ऊपर खड़े एक प्रहरीकी धुँधली मूर्त्ति पर पड़ी। शायद यहाँके वृक्षोंके झुरमुटोंके भीतर आदमीके पैरोंका शब्द सुनकर प्रहरी इस ओर बढ़ आया है। अभी चूड़ाजी कुछ सोच रहे थे, कि एक राजपूतने चुपचाप तीर छोड़ ही दिया। उस हतभाग्य प्रहरी का मृतक शरीर कोटकी भीतसे नीचे गिर पड़ा। धमाकेकी आवाज़ सुन, क्रमसे चार सौ मनुष्य भीतके नीचे-ऊपर इकट्ठे हो गये। हाय! हाय! अब तो बिना रक्त-प्रवाहके कोट का द्वार खुलता नज़र नहीं आता। चूड़ाजी रोष-वश हाथसे हाथ मलने लगे। अब छिपे रहनेका अवसर न जान कर, सेनाको आगे बढ़ने की आज्ञा दी।

पाठक! कलेजा थाम कर रणका भयानक चित्र देखें। मेवाड़ी सेनाका "हर हर महादेव!" और "एक लिङ्गकी जय" का शब्द दशों दिशाओंमें गूँज उठा। एक दल प्राचीर लाँघनेके अर्थ दौड़ गया और दूसरा झुरमुटोंमें छिपा रह कर अतिशीघतासे तीरों द्वारा भीलोंको वध करने लगा।

भीलगणोंको शत्रुके इस अनायास आक्रमण की कुछ भी शंका नहीं थी। वे घबरा गये। उनके हल्लेसे पृथ्वी-आकाश कम्पित होने लगे। जो सेना कोलाहलकारी राजपूत सेनाओंको रोकनेके लिये दूसरी ओर गयी थी, वह भी शत्रुकी चाल समझ कर धीरे-धीरे इकट्ठा होने लगी। कोई–कोई भीतके ऊपरसे तीर मारते; कोई–कोई मत्त हो प्राचीरसे कूद कर राजपूतों पर आक्रमण करते। बस; अब क्या था, तत्काल प्राचीरके नीचे और वृक्षोंके मध्यमें भयङ्कर समर होने लगा। रणचण्डी खप्पर लिये मृतकोंका रुधिर पीनेके लिये इधर-उधर दौड़ने लगी।

प्राचीर पर खड़े हुए भील वर्छा फेंककर शत्रुओं को मारने लगे। ढेरके ढेर मृतक शरीरोंसे कोटका प्राङ्गण परिपूर्ण होने लगा। वीर राजपूत लोग, इन्हीं मृतक-शरीरोंके ऊपरसे खड्ग व बर्च्छा चलाने लगे। चढ़ाई करनेवालोंके शरीरसे रक्त की धारा वह चली। शत-शत भील वृक्षोंके झुरमुटमें घुस पड़े।

चूड़ाजीके वीर राजपूतोंने सिंहके समान गरज-गरज कर इनका संहार करना आरम्भ कर दिया। प्रबल भील लोग भी युद्धमें कुछ ऐसे-वैसे नहीं थे, अतः खूब मुठभेड़ हो गई। पर्वत पर रुधिर बह चला।

चढ़ाई करनेवाले राजपूतों और भीलोंके सिंहनाद क्षण क्षण में आकाश मण्डल कम्पित होने लगा। सहसा इन शब्दोंको

मथन करता हुआ, दुर्गकी दीवारसे "महाराणा लाखाजी की जय"—यह शब्द वज्रनाद सा सुनाई दिया। एक मुहूर्त्त तक सब उसी ओर देखते रहे। देख पड़ा कि, एक वीर राजपूत, शत्रुओंको भेदकर मृत शरीरोंके ऊपरसे अपने बर्छेपर सहारा दे, दुर्गकी भीतपर चढ़ गया है और भीलोंका झण्डा हाथमें लिये प्रहरियोंको मार लाखाजी की जय मना रहा है।

पाठको! आप इस वीर को तो अवश्य ही पहचान गये होंगे; यह आपके पूर्व परिचित वीर कुमार 'चूड़ामणि' हैं।

राजपूतों और भीलोंने एक क्षण तक समर रोक कर विस्मयोत्फुल्ल नेत्रोंसे तारोंके प्रकाशमें उस दीर्घकाय वीरकी मूर्त्ति देखी। वीरका लोहेसे बना चप तारोंके प्रकाशमें चमक रहा था। हाथ और पाँव दोनों रुधिरसे भीगे हुए थे। विशाल छातीमें दो-एक तीरके घाव लगे हुए थे। एक हाथमें रुधिरसे भींगा बर्छा शोभायमान था। मालूम होता था कि, स्वयं रणदेव बर्छा धारण कर आकाशसे दुर्गकी भीत पर उतर पड़े हैं। कुछ काल तक सब चुप रहे। फिर भील लोग शत्रुको प्राचीरपर चढ़ा हुआ देखकर चारों ओरसे सवेग आने लगे। झुण्डके-झुण्ड शत्रुओंने आकर चूड़ाजीको घेर लिया।

यद्यपि चूड़ाजी खड्ग और बर्छा चलानेमें अद्वितीय थे; तथापि असंख्य वीरोंसे युद्ध करना असम्भव है। चूड़ाजीके जीवनमें भी अब संशय है। अतः राजपूतगण भी शान्त नह थे वे चूड़ाजीके सिंह-विक्रमको देख उत्साहसे परिपूर्ण हो-

तत्काल दौड़-दौड़कर प्राचीरपर चढ़ने और झट चूड़ाजी की रक्षाकर युद्ध करने लगे। बड़ा तुमुल संग्राम हुआ। बहुतसे राजपूत कट गये। एक भीलने अपना बर्छा मौका पाकर चूड़ाजी की ओर सीधा किया। चूड़ाजी असावधान थे। और इसी चोटसे कुमारका वारान्यारा था। बर्छा अभी हाथसे छुटा ही चाहता था कि, "महाराणा और कृष्णसिंह सेना सहित आ पहुँचे," यह वज्रनाद सुनाई पड़ा। इस गड़बड़से भीलका निशाना चूक गया और बर्छा कानके पाससे सनसनाता हुआ निकल कर दूर जा गिरा।

Her looks were deep imprinted in his heart.

जब महाराणाने सुना कि, कुमार भीलोंपर चढ़ाई करनेको प्रस्थान कर गये हैं, तो वे भी दश-सहस्र वीर सीसोदियोंको लेकर बैराटगढ़की ओर चढ़ धाये तथा ऐन मौक़े पर पहुँच, प्राचीरपर चढ़कर नीचे कूद पड़े और दुर्गके भीतर जाकर दाखिल हो गये। कुमारके सैनिकोंने समझा कि, अब यहाँ युद्ध करनेकी क्या आवश्यकता है? इसीसे सब प्रभुके साथ ही साथ कोटके भीतरकी ओर चले। भील लोग कुछ तो मारे गये और कुछ घायल हुए, इसीसे उन लोगोंने राजपूतोंका पीछा नहीं किया।

महाराणाजी तेज़ीसे भिल्लराजके गृहमें पहुँचे। वह गृह अति दृढ़ और रक्षित था। उनतीस सहस्र राजपूतोंके बर्छोंकी चोटसे द्वार काँप तो गया, पर टूटा नहीं। राणाजीके आज्ञानुसार राजपूतोंने प्रासादको घेर कर बाहरके समस्त प्रहरियोंको घेर लिया। अब राणाकी आज्ञा ऊँचे शब्दोंमें सुनायी गयी कि,—"यदि भिल्लराज घर नहीं खोलते, तो अग्नि लगा दो।"

भीलोंने भी उसी धृष्टतासे उत्तर दिया, "कुछ पर्वाह नहीं।"

तत्काल दो सौ राजपूत ज़नाने द्वार पर मशाल लेकर अग्नि लगाने लगे। ऊपरसे भिल्लराज और उनके साथियोंने तीर और बर्छे चलाकर अग्नि बुझानेकी चेष्टा की। सैकड़ों राजपूत हाथमें मशाल लिये हुए गिरे, पर अग्नि धधक उठी।

वह प्रचण्ड प्रकाश ज़ोर-शोरसे आकाशको उठा और उसने अन्धकारमयी रात्रिको प्रकाशमयी कर दिया। आकाशकी लपटोंसे सबोंने जाना कि, राणाजीकी दुर्जय सेनाने भीलोंका दुर्ग हस्तगत कर लिया। भीलराजने, जो वीरोंको करना योग्य है, सब कुछ किया ; पर सफल नहीं हुआ। अब साथके योद्धा-ओंके संग मरना बाकी था।

जब गृहमें पूर्ण अग्नि लग गयी, तब भिल्लराज साथियोंके साथ छतसे कूदकर नीचे आये। एक-एक भील महा-वीरके तुल्य खड्ग चलाने लगे। उनके खड्गसे बहुतेरे राजपूत मारे गए। अब सबोंने भीलोंको घेर लिया। वीरभद्र बहुत कुछ घायल होकर भी अब तक बड़े विक्रमसे लड़ता रहा। परन्तु अब वह चारों ओरसे घिर गया। उसके चारों ओर ही तलवारें खिंच गईं। अब उसके जीनेकी तनिक भी आशा नहीं रही। उसी समय फिर दयालु महाराणाकी आज्ञा सुनाई गयी "भीलराजको बन्दी कर लो, मारो मत।"

वीरभद्र पकड़ लिया गया। उसने राणाके निकट अस्त्र पटक कर, दया चाही। अधीन हुए शत्रुको मारना, वीरलोग पाप समझते हैं ; अतः भील-वधकी आज्ञा रोक दी गई। परन्तु

बैराटगढ़के नामको मिटा देनेका संकल्प राणाजीने प्रथम ही कर लिया था ; अतः उस गढ़को नष्ट कर, उसके निकट ही बदनोर नामक एक नया ग्राम बसाया और भीलोंको उसमें बसनेकी आज्ञा प्रदान की। राणाजीके दयालु स्वभाव और अपने साथ की हुई असाधारण कृपाका भीलोंपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि, वे राणाके राज्यमें बसनेसे बहुत प्रसन्न हुए और आगे चल कर वे वीर मेवाड़के राणाओं को संकटके समय सहायता देकर, इस समयकी कृपाका बदला चुकाते रहे।

इस प्रकार वहाँ शान्ति स्थापित कर, राणाजी चित्तौड़ चलनेकी इच्छा करके उसी जंगलमें ठहर गये।

* * * *

आज सन्ध्या समय हाथ मिलाकर हवा खाते हुए दोनों मित्र—चूड़ाजी और नारायणसिंह,—बहुत दूर निकल गये।

पाठक ! ज़रा छिप कर हमलोग भी तो इनके साथ चलें ! ये परस्परमें कुछ वार्त्तालाप भी कर रहे हैं ; सुनिये।

कुमार—भाई नारायण ! सच पूछो तो भील भी वीरतासे ख़ाली नहीं होते। पर, हाँ राजपूत वीरोंका सामना करना ज़रा टेढ़ी खीर है !

नारायण—ठीक है, पर (हठात् दृष्टिके ऊपर जाते ही घबड़ा कर) कुमार ! देखिये तो सही, ये भयानक काली-काली

घटाएँ कहे देती हैं, कि अभी वर्षा होगी। शिव! शिव! कैसा भयानक और कैसा विकट समय है! यदि वर्षा हुई, तो फिर हमलोगोंको कहीं आश्रय मिलना भी कठिन हो जायगा। आह! यह देखिये, एक बूँद पानी भी टपका। अब तो आप शीघ्रता से लौटनेका उद्योग भी निष्फल ही जानें। क्योंकि हमलोग शिखरसे डेढ़ या दो कोस आगे निकल आये हैं।

कुमार—देखो! शीघ्रता करो, सामने एक छोटा सा बँगला देख पड़ता है। वहीं चलकर आश्रय लेना उचित होगा।

"आह! पानी! यह लो! यह तो आगया! अब बचना कठिन है। चलो! चलो!" इतना कहते हुए दोनों जने हाथ मिलाकर शीघ्रतासे चले। थोड़ी दूर जाते न जाते बड़ी-बड़ी बूँदें टपकने लगीं।

दोनों बँगलेके निकट पहुँच गये। बँगलेकी गुम्बजदार छतें उसके सुन्दर-सुन्दर खम्भों पर अड़ी हुई थीं। बँगला बड़े ही साजबाजसे सजा हुआ था। खम्भोंके बीच मखमली हरे पर्दे मेहराबीदार होकर लटके हुए थे। कुछ खम्भे बेला और गुलाबके फूलोंसे लदे हुए थे।

बँगलेके नीचे फर्श पर सुन्दर मखमली गद्दा बिछी हुई थी, जिसके एक सिरे पर सुन्दर तकिये पड़े हुए थे एवं उनके सहारे दो सुन्दर स्त्रियाँ बैठी हुई थीं दोनोंके वस्त्राभूषण राजोचित थे। दोनोंके चेहरों पर अनूठा तेज था। दोनोंमेंसे एककी अवस्था १३ या १४ वर्ष की थी और दूसरीकी क़रीब

पन्द्रह की थी। बड़ी वयसवाली शायद उस अपूर्व बालिकाकी सखी थी।

चूड़ाजी और नारायणसिंह इस अनूठे बँगलेको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए; पर अपरिचित स्त्रियोंके सम्मुख जाना कदापि उचित न जान, बाहर ठहर गये।

उन दोनों स्त्रियोंकी दृष्टि इन दोनों भींगते हुए आगन्तुकों पर पड़ी। देखते ही उन्होंने अपनी लौंडियों को बुलाकर संकेतसे उन दोनों अतिथियोंको सादर बुलानेकी आज्ञा दी।

दासियोंने कुमार और नारायणसिंहके पास जा, उनसे अत्यन्त नम्र होकर भीतर चलनेको कहा। वे बेचारे तो यह चाहते ही थे, अतः धन्यवाद दे भीतर चले आये।

उन दोनों सुन्दरियोंने उनका सत्कारसे स्वागत किया।

एकने कुछ नम्रतासे पूछा, "क्यों महाशय! क्या मैं जान सकती हूँ, कि आप दोनों किस राज्यकी दीपशिखा हैं और इधर इस निर्जन काननमें किधरसे पधारे हैं?"

नारायण—हे वरारोहे! प्रथम आप ही कहें कि, आप दोनों किस सरोवरकी कमलिनी हैं?

बड़ी सखी—यह जो बैठी हैं, ये 'सोलीन' के रणबाँकुरे चौहानपति महाराजा भीमसेनसिंह की पुत्री हैं और मैं इनकी एक दासी हूँ। इनका नाम कुमारी उमामोहिनी है, और मुझे लोग मालती कह कर पुकारते हैं।

नारायण—धन्यवाद ! मैं भी अपना परिचय देता हूँ। यह जो हमारे साथ हैं, यह सूर्य-कुल-कमल-दिवाकर वीर-केसरी महाराणा लाखाके पुत्र कुमार चूड़ाजी हैं और मैं इनका एक अनुचर नारायण हूँ ।

मालती—अहा ! क्या मैं उस वीरको सम्मुख देखती हूँ, जिसका यश दिग्दिगन्त में छा रहा है। कुमारी ! देखो। अहा, क्या ही सुन्दर वेश है !

उमा०—(बहुत धीमे और लजीले स्वरसे) इसमें क्या सन्देह है। सखी ! मेरे भाग्यवश आये, इन वीर अतिथियोंका तुम यथोचित सत्कार कर श्रम दूर करो।

कुमार—नहीं, नहीं; आपलोगोंको इतनी ही कृपा एक अनजाने पथिकके लिये अधिक है। हमलोगोंको अन्य सत्कार स्वीकार कराने से क्षमा करें। अभी हमलोगोंको अपने शिविर पर जो यहाँसे डेढ़ दो कोस पर है, लौट जानाहै, और रात्रि भी अन्धियाली है; तिसपर बादल उमड़ आये हैं। अतः हमलोग शीघ्रही प्रस्थान करेंगे ।

पाठक ! वीर चूड़ाजीका जो हृदय बड़े-बड़े शत्रुओंके सामने अधीर नहीं होता था, वही आज एक सुकोमल सुन्दरी अबलाके निकट अधीर हो गया।

उमाके प्रेमने बेचारे कुमारके स्वच्छ दर्पणवत् हृदयको धुमैला कर दिया।

यही दशा नारायणसिंह की भी समझें। दोनों मित्रोंने एक ही साथ प्रेमका पाठ पढ़ लिया।

पाठक! ज़रा उमाके हृदयको तो देखिए! बेचारी कोमलहृदया बालिकाकी भी वही दशा पाई जाती है। वहाँ भी चूड़ाजी की प्रेममूर्त्ति उगी देख पड़ती है!

पाठक! यह वह प्रेम नहीं, जो दामिनी आकाशसे करती हैं; बल्कि यह वह स्वच्छ प्रेम है, जो कुमुदिनी और चन्द्रमाके बीच होता है। यह कृत्रिम नहीं, बल्कि स्वाभाविक प्रेम है!

वर्षा बन्द हो गई; कुमार अब चलनेको प्रस्तुत हैं,—यह जान उमा अपने प्रिय अतिथिके वियोगसे कातर हो उठी।

प्रेमदेव! तुम धन्य हो! उमा, जो आज तक बालिका थी, अब तुम्हारी शिष्या होगई, और वह उस विकट पथ का अवलम्बन किया चाहती है, जिस पर बड़े-बड़े साहसी फिसले बिना नहीं रहते।

उमा—प्रिय अतिथि! आप फिर कभी अपनी दर्शनरूपी पीयूषधारासे इन पिपासुओं को तृप्त करेंगे?

कुमार—अवश्य। कुमारी! यदि अवकाश मिला, तो फिर शीघ्र ही आपसे मिलूँगा! आज मैं धन्य हूँ, जो अकस्मात् आपलोगों का दर्शन होगया। यदि आप बुरा न मानें, तो क्षत्रिय होकर भी मैं कुछ याचना करूँ!

उमा—(लज्जासे) प्रिय अतिथि! "मोहि अदेय कछु नाहीं"।

कुमार—आपकी सुन्दर अगुलियोंकी मुद्रिका!

उमा—हाँ! एक प्रण पर यह हो सकता है कि, आप इसे किसी को नहीं दें और अपनी मुझे दें।

कुमार—(अपने हाथकी मुद्रिका देते हुए) "हे गृह-स्वामिनी! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। प्राण रहते यह आपको चिन्ह-स्वरूपा मुद्रिका नयनोंकी ओट नहीं होगी।

उमा—(मुद्रिका देकर) आर्य! इस दासी पर कृपा रखेंगे और कभी कभी......

चूड़ाजी, इसका उत्तर केवल नेत्रोंसे देकर, और—"अब इस हृदय-मन्दिरमें दूसरी देवीकी अर्चा नहीं होगी"—कहते हुए नारायणसिंह की ओर फिरे।

पाठक! वहाँ भी हृदय बदलौअल हो रहा था।

कुमार—नारायण! विलम्ब हुआ, चलो।

हाय! यह बात बेचारे नारायणको बहुत बुरी मालूम हुई, क्योंकि अब वह अपनी प्रियाके थोड़े ही समयके अतिथि हैं। कुमार! ज़रा बेचारे नारायण पर कृपा कीजिये और थोड़ी देर और भी उन्हें मालतीपुष्पकी सुगन्धिका भ्रमर बना रहने दीजिये। किन्तु नारायण सिंहतो कुमारके आवाज़ देते ही सावधान हो गये थे; अतः बोले,—

"चलिये। सचमुच देर हुई, महाराणाजी हम लोगोंको ढूँढ़ते होंगे।" यह कह, दोनों जने वहाँसे विदा हो गये।

पाँचवाँ परिच्छेद

आज महाराणाजी अपनी सेनाके साथ चित्तौड़को प्रस्थान करेंगे। समर-विजय हो ही गया है। अब अपने स्त्री-पुत्रोंको गाढ़ आलिङ्गन करेंगे—इत्यादि,—सोच-सोच कर सब वीर उत्तेजित हो-हो कर गीत गारहे हैं-और डेरा डण्डा उठा-उठा कर सब वस्तुएँ गाड़ियों पर लदवा रहे हैं। कुछ सेना आगे बढ़ भी चुकी है।

महाराणा प्रभात कालके समय नित्य कार्यसे निवृत्त हो कर बैठे हैं। पासही चूड़ाजी, कृष्णसिंह, नारायणसिंह इत्यादि सेनापतिगण बैठे हैं। कुछ बातचीत भी होती जाती है। इतनेमें एक चोबदारने आकर कहा—"जासूस उपस्थित हैं।"

महाराणा—शीघ्र भेजो।

चोबदार "जो आज्ञा" कहकर चला गया।

कुछ देरमें जासूसगण उपस्थित हुए। इन लोगोंने समाचार दिया कि, एक बड़ी भारी सेना चली आती है। शायद यह सेना मुहम्मदशाह लोदीकी अध्यक्षतामें चित्तौड़ जीतनेका आती है।

कृष्ण—महाराज ! इस समय भीलोंको जीतकर राजपूत आनन्दोन्मत्त हो रहे हैं। ऐसे ही समयमें यवनोंसे भिड़ जाना उचित है।

माधव—ठीक है। हम लोगोंको यह मालूम हो चुका था कि, मेवाड़को दिल्लीकी बादशाहतमें मिला देनेकी मन्त्रणा बादशाही दरबारमें हुआ करती है। अस्तु, भला हुआ जो अचानक इनका धावा नहीं हुआ।

अभी इन्होंने अपनी बात भी पूरी नहीं की थी कि, दूसरा जासूस-दल आ पहुँचा और समाचार दिया कि, यवन-सेना बदनोरके निकट पहुँच कर नगर लूट रही है।

महा०—(गम्भीर भावसे) कृष्ण ! सेना पंक्तिबद्ध करो। अभी हम उन पामर यवनोंको इस धृष्टताका मज़ा चखा देते हैं।

कृष्ण,—"जो आज्ञा" कहकर चले गये।

एक घण्टेके बाद उस बड़े भारी मैदानमें, जहाँ अभी-अभी रुधिरकी धारा बह चुकी है, ७० सहस्र राजपूत सेना समुद्रकी भाँति उमड़ती हुई इकट्ठी हो गई। सेनाकी फौलादी टोपियाँ सूर्य्यकी किरणोंमें चमकने लगीं।

चूड़ाजी महाराणाके साथ सजधज कर रणभूमिमें आये। महाराणाके आते ही "जय-जय" शब्द गूँज उठा। महाराणाने आतेही एक बड़ी भारी वक्तृता दी :—

"भाइयो !

तुमने जैसी विजय अभी भीलोंपर पायी है, वैसी ही

विजय धैर्य और पराक्रमके साथ इस समय भी पानी चाहिये। इन पहाड़ी लोगोंकी अपेक्षा यवनोंको जीतना कुछ कठिन काम नहीं है। बिखरे हुए पहाड़ी लोगोंको जीतनेमें जितना श्रम और समय अपेक्षित था, इकट्ठे होकर आये हुए मुसल्मानोंको जीतनेमें उतना कदापि आवश्यक नहीं होगा। तुम्हारे धैर्य्य और प्रचण्ड विक्रमके सम्मुख ये ठहर सकने वाले नहीं हैं। हे मेरे शूर सिंहो! तुम्हारे सामने न ये कभी ठहर सके हैं और न ठहर सकेंगे। महाराणा हम्मीर सिंहजीने तुम्हारे पराक्रमसे इन्हें मार भगाया था, उसे अभी ये भूले भी नहीं होंगे। ऐ मेरे शूर-वीर भाइयो! मेरे साथ एकही सपाटेमें सिंह-गर्जन कर इन पर टूट पड़ो, और अपनी भूमाताको अपवित्र करनेवालोंको मार भगाओ। चलो, अपने भाले-तलवारोंको सम्हालो तथा शत्रुओंको इनकी धृष्टताका ऐसा मज़ा चखाओ कि, फिर ये मेवाड़का नाम तक नहीं लें।"

इस वक्तृताको सुनकर सम्पूर्ण सेना उन्मत्त सी हो गयी और एक लिङ्ग तथा "महाराणा की जय"का शब्द करने लगी।

उधर यवन-सेनामें मुहम्मद शाहने भी खड़े होकर बड़ी भारी वक्तृता दी :—

"मेरे प्यारे लड़ाको!

देखो सामने जो काफिरोंकी फौज पड़ी है, इसे हम या तो हराकर अपने दीनका झण्डा खड़ा करें या जान ही दे देवें।"

मुसलमानोंकी सेनामें अभी तक किसी प्रकारकी फूट नहीं थी और न वे अभी तक आलसी, विलासी ही हो पाये थे। वे दूसरे स्थानोंमें प्राप्त विजयसे उत्साहित हो ही रहे थे; तथापि इस अवसर पर, धीर-वीर सीसोदियोंके सन्मुख ठहर नहीं सके।

जहाँ पर युद्धके निमित्त स्थान ठीक हुआ था, वहाँ चारों ओर पहाड़ था। वहाँ दो पहाड़ोंके बीचमें एक संकीर्ण मार्ग भी था।

महाराणाने माधवसिंहको बुलाकर कहा कि, "तुम पाँच हज़ार सेना लेकर उन दोनों पहाड़ों पर छिप रहो।"

चूड़ाजीके अधिकारमें दश सहस्र सैन्य देकर, उन्हें आगे लड़नेको भेजा। कृष्णसिंहके अधिकारमें २० सहस्र सेना—कुमारकी सैन्यको समय पर सहायता करनेके लिये—देकर तत्पर रहनेकी आज्ञा दी और अपने अधिकारमें ३५ सहस्र सेना रखकर पहाड़के घूमघुमौए रास्तेसे निकल कर पथ रोकनेके लिये नाके पर जा डटे।

आज सबेरे ही नित्य-कार्य्यसे निश्चिन्त हो दोनों सेनाएँ मैदानमें जा डटीं। एकबारगी दोनों सेनाओंमें नगाड़े गड़गड़ाने लगे। उधर यवनोंकी ६० सहस्र सेना चार भागोंमें विभक्त होकर महबूबखाँ सेनापतिके अधिकारमें आगे बढ़ी।

स्वयं चूड़ाजीने मुहम्मदशाह पर बड़े विक्रमसे धावा किया।

चूड़ाजीके अनुपम पराक्रमको देखकर समस्त सीसोदिये वीर यवनों पर टूट पड़े। भाले और खड्ग बड़े वेगसे चलने लगे। यवनोंने बड़ी वीरता दिखलाई। उनकी तलवारोंसे बहुत से वीर वीरगतिको पहुँचे। इसीप्रकार दो पहर तक खूब घन-घोर युद्ध हुआ। बहुतसे यवन लोग मारे गये। राजपूतोंकी हानि भी कुछ कम नहीं हुई। दोनों ओरसे युद्ध बन्द किया गया। सैनिक खाने-पीनेमें लगे। आज युद्ध बन्द रहेगा, यह जान-कर दोनों ओरके सैनिक अस्त्र-शस्त्र ठीक करने लगे।

आजके दिन सन्ध्या समय मुहम्मदशाह बहुत तड़क-भड़कदार पोशाक पहने बैठा है। उसके चारों ओर सेनापतिगण बैठे हैं और कलकी लड़ाईके लिये परामर्श होरहा है। चारों ओर उज्ज्वल दीपावली जल रही है और सायंकालीन शीतल वायु वनलताओंसे पुष्प-गन्ध लाकर सबको पुलकित कर रही है। आकाशमें अन्धकारके सिवा दो एक तारे देख पड़ते हैं।

मुहम्मद—(कुछ मुस्करा कर) जहाँ उसे कब्जेमें लाया, फिर फतहमें क्या देरी है ?

मुहब्बत—हुजूरकी फौजके सामने राजपूतोंकी फौज इस तरह तित्तर-बित्तर हो जायगी, जैसे तूफानके सामने सुखे पत्ते।

मुहम्मद प्रसन्न हो कर हँसने लगा।

महबूब—जहाँपनाह! याद होगा कि, पिछले साल कुछ राजपूत हुजूरके ख़ास मुल्कके भीतर घुस आये थे; उस समय हमारी तमाम फौजने मुश्किलसे दो पहर बराबर मिहनत

करके इनको बाहर निकाला था। एक ही शहरको फतह करनेमें हमारे हज़ारों हमक़ौमी काम आये। फिर इस साल सब मुक़ामोंमें हमारी फौज रहते भी क्षेत्रसिंह मुसलमानी रियासतोंको बराबर बरबाद कर आया।

सब सभासद् चुप रहे और मुहम्मद भी कुछ एक विरक्त हुआ, पर क्रोध रोककर बोला,—"महबूबखाँ! तुम्हारी उम्र ज़ियादा हो गयी है, पर तुम अब तक उन पहाड़ी काफिरोंसे डरते हो; पहले तो तुम ऐसे नहीं थे।"

महबूब चुप हो रहा।

मुहब्बत—पीरमुर्शद! आप बजा फरमाते हैं, राजपूत बेशक काफिर हैं। वे पहाड़ी चूहे हैं। उनका जङ्गमें क्या चलता है?

मुहम्मद प्रसन्न हुआ और हँस पड़ा।

महबूब—जबतक ये लोग दिल्ली नहीं फतह करते, तभी तक ख़ैर समझिये।

मुहम्मद—अरे! दिल्लीके जवानोंके आगे उनकी कुछ दाल न गलेगी।

सब सेनापति—"बजा है, दुरुस्त है,"कहकर उसकी बातकी बड़ाई करने लगे।

मुहम्मद—ख़ैर, कलके जङ्गके लिये तैयार हो जाओ।

इसके बाद सभा-विसर्जन हो गया।

छठाँ परिच्छेद

पाठक! ज़रा चलिये तो आज सीलोन राज्यकी शोभा देख आयें। यह राज्य एक बड़े भारी पर-कोटेके भीतर बसा है। इसकी शोभा अनुपम है। यहाँके राजा भीमसेन सिंह सुन्दर गृह बनवानेके बड़े शौक़ीन हैं। इस राज्यकी बड़ी-बड़ी गगनचुम्बि अट्टालिकाएँ अत्यन्त शोभायमान हैं।

पाठक! चलिये ता भला, रनवास में देख आवें, कि बेचारी उमामोहिनीके हृदय पर क्या बीतती है। आज दस दिवस हुए, जब वह अपने विहार-कुञ्जके बँगलेसे आई है। बस, तभीसे सदा उदास रहती है। खाना-पीना भी केवल नाममातका रह गया है। कोई नहीं जानता है, कि उसे क्या चिन्ता है। बड़े-बड़े वैद्य दवा करते हैं, परन्तु प्रेमके असाध्य रोगमें कोई ओषधि काम थोड़े ही करती है।

उमामोहिनी उस तरुण कुमारकी चिन्ता करती है, जो उसके साथ अँगूठी बदलौअल कर गया था। कुमार

इतने दिन युद्धके उल्लासमें मग्न रहे ; दुर्ग-हस्तगत करते रहे ; शत्रुओंको विध्वंस करते हुए विक्रम और बाहुबलसे वीरनाम पाते रहे हैं। फिर क्या वे इस समय इस अभागिनीको चित्तमें स्थान दिये रहे होंगे ? वे कह गये थे कि, मैं सदा तुम्हें याद रक्खूँगा। पर यह बात उन्हें क्या याद होगी ? मनुष्योंका मन अनेक काय्य, अनेक चिन्ता, अनेक शोक और अनेक उल्लासोंसे सदा परिपूर्ण रहता है। जीवन आशापूर्ण है। आज यह करेंगे, कल वह करेंगे, इसी प्रकारकी अनेक आशाओं में जीवन बीतता है। आशा फलवती हों या न हो, पर जीवनमें सदा उल्लास बना रहता है। राजदरबारमें, समरक्षेत्रमें, शोकगृहमें, नाट्यशालामें तथा अनेक प्रकारके काय्योंमें हृदय भाँति-भाँतिकी चिन्ताओंसे परिपूर्ण रहता है; परन्तु अभागिनी अबलाओं को क्या है ?

प्रेम ही हमारा जीवन है, प्रेम ही हमारा जगत है। जीवनेश्वर ! कहीं इसे निराश नहीं करना।

धीरे धीरे एक बूँद आँसू उसके कपोलों पर ढलक आया।

फिर चिन्ता करती है कि, वे तरुणवीर क्या इस हतभागिनीको नहीं भूले होंगे ? क्या इस समरमें उनका मन स्थिर होगा ? हाय ! कौन जाने वे यदि सुख पाकर मुझे भूल गये होंगे। उन्हें स्त्रियोंकी क्या कमी है ? उन्हें सुखकी क्या कमी है ? नवीन वीर इतने दिन पीछे मुझे ज़रूर भूल गये होंगे।

फिर हमारा हृदय, हमारा जीवन, पुरुषोंके खेलकी सामग्री है। पल भरमें खेल समाप्त होनेपर, अबलाका जीवन खेद और दुःखपूर्ण हो जाता है।

उमा चुपचाप रोने लगी। इतनेमें मालती हाथमें एक गठरी लिये हुए आ पहुँची और आते ही उसने उमाको उठाया और कहा—"बहिन! यदि तू इस भाँति रोया करेगी, तो तेरे जीवनमें भी संशय हो जायगा। उठो प्यारी! देखो यह किसका पत्र है?"

उमा—(उठकर) कहाँ है देखें!

मालती—(हाथमें देकर) देखो।

पाठक! यह कुमारका पत्र था, इसका सारांश हम आपके मनोरञ्जनार्थ नीचे उद्धृत किये देते हैं।

"हृदय-मन्दिरकी एकमात्र अधिष्ठात्री देवि!

आज कल मैं यवनोंके युद्धमें लीन हूँ। इसलिये क्षमा करना। आशा थी कि, मैं कुछही दिनोंमें तुम्हारे मुखचन्द्रको देख अपने नयन-चकोरोंको आनन्द दूँगा। परन्तु युद्ध कुछ ऐसा बेजोड़ हो रहा है, कि यदि तुम्हारा प्रेमभिक्षुक युद्धमें वीरगतिको पहुँचे, तो शोक नहीं करना। पुनः दूसरे लोकमें संयोग होगा। पत्र लिखकर विदा माँगता हूँ। यदि भाग्यवश विजय प्राप्त हुई, तो फिर मिलूँगा।

प्रेमैषी

चूड़ा।"

इस पत्रको पढ़कर उमा तो एकदम स्तब्ध होगई ; कुछ देर बाद पूँछा—"यह पत्र कहाँसे मिला ?"

मालती—एक सिपाही दे गया था। सखी ! मेरी इच्छा है कि, मैं भी इस युद्धमें, छद्मवेशमें जाकर कुमारकी सहायता करूँ। तुम्हारी क्या राय है ?

उमा—जैसी तेरी इच्छा। मुझे कुछ कहना नहीं।

मालती—अच्छा तो मैं विदा होती हूँ। तुम सुखसे रहना। मेरी अनुपस्थितिका कारण जो उचित समझना, दे देना। इसके बाद मालती अपना भेष बदलकर, मर्दाना पहिनावा पहिन कर, खासी नवयुवक योद्धा बन गई। देखने वालोंको यह स्वप्नमें भी सन्देह नहीं हो सकता था कि, यह वही सुकुमारी मालती है।

अब मालती उमासे मिलकर प्रेमाश्रु गिराती हुई विदा हुई। वह सीधी कुमार और राणाकी सेनाकी ओर चली।

पाठक ! अब मैं इस छद्मवेशी युवकको छद्मनाम "मणिसिंह" कहकर ही सम्बोधन करूँगा।

रात अभी अधिक नहीं गई थी कि, मणिसिंह कुमार चूड़ाजीके शिविरके द्वार पर पहुँचा। इस समय कुमार पलँग पर लेटे-लेटे उमामोहिनीकी मुद्रिका प्रेमसे हाथमें लेकर देख रहे थे।

मणिसिंहके आनेका समाचार दिया गया। कुमारने शीघ्र ही नवयोद्धाको सम्मुख उपस्थित करनेकी आज्ञा दी।

मणिसिंह उपस्थित किया गया और वह सादर प्रणाम कर सम्मुख खड़ा हो गया।

कुमार—आप कौन हैं? और किस निमित्त मुझसे मिलनेकी कृपा की?

मणि—इस दासको लोग मणिसिंह कहते हैं। मैं भाबलपुरका रहने वाला हूँ। मैं चौहान क्षत्रिय-कुमार हूँ। मुझे बड़ी चाह थी कि, आप सरीखे वीर सरदारके अधोन रहकर युद्धका कार्य्य सीखूँ।

कुमार—अच्छी बात है। आप मेरे पास काम सीख सकते हैं।

मणिने अपना खड्ग निकाल कर कुमारके सम्मुख रख दिया; कुमारने उसे अपने हाथसे छू दिया। थोड़ीही देरकी बातचीतके वाद कुमारको ऐसा मालूम होने लगा कि, मणिसिंह जैसे उनका पुराना परिचित हो। बातचीत करते-करते आधी रात बोत गई; तब कुमारने कहा कि, अब सोना चाहिये।

मणिसिंह उठकर बाहर चला गया और कुमार परदा गिराकर सो रहे। अभी उनको सोये कोई घण्टा भर भी नहीं हुआ होगा कि, एकाएक किसीकी आहटने उन्हें चौंका दिया। कुमार उठकर बैठ गये और अपनी तलवार खूँटीसे उतारकर सँभलकर तय्यार होगये। एक खटका फिर हुआ और साथही एक मनुष्य खेमा फाड़कर धीरेसे भीतर आया। पर आते ही कुमारको जागता हुआ देख ठिठक गया; लेकिन फिर धीर

तासे उसने एक रुमाल जेबसे निकाल कर हिला दिया, जिससे कुछ खुशबू निकलने लगी। इसकी खुशबू कुछ ऐसी मस्त थी, कि उससे कुमार अचेत हो गए।

आगन्तुकने अपने दो साथियोंको, जो बाहर खड़े थे, बुलाकर कुमारको उठा लिया और जङ्गलका रास्ता लिया।

ये दुष्ट चोर कुमारको लिये सीधे मुसलमानोंकी सेना की ओर बढ़े जाते थे कि, इतनेमें किसीके भारी पदचापने इन्हें जहाँका तहाँ ठिठका दिया।

पदचाप और भी तेज़ हुआ। लोगोंने फिर कर जो देखा तो एक भयानक मूर्त्तिपर नज़र पड़ी।

दुष्टोंने अचेत कुमारको वहीं छोड़ खड्ग निकाल, मूर्त्ति का सामना किया।

पाठक! अब ज़रा राजपूत-सेनाकी ओर झुकें और देखें कि यहाँ क्या विप्लव मच रहा है।

रात हीमें मुसलमानोंने उनपर छापा मारा। बातकी बात में चारों ओर मशालें जल गयीं। राजपूतगण जैसे-तैसे नङ्गे बदन उठकर तलवार चलाने लगे। लेकिन बड़ी गड़बड़ मची। रात अँधियाली होनेके कारण सेना अपने ही लोगोंको शत्रु समझ कर मारने लगी।

कृष्णसिंहकी सेना भी कुमारकी सेनाके सहायतार्थ चली। कृष्णसिंह स्वयम् कुमारके शिविरमें गये, पर वहाँ देखा तो कुमार नदारद। अब क्या हो? बेचारेके सिर पर वज्रपात होगया।

इतने पर भी, कृष्णसिंहने बड़ी वीरताके साथ शत्रुका सामना किया ; लेकिन जब यह बात फैल गई कि, कुमार नहीं हैं, तब तो सैनिकोंके क्रोधका ठिकाना नहीं रहा। वे कटकटाकर मुसलमानोंको ही इस नीच कार्य्यका कर्त्ता समझकर मारने लगे।

इसी प्रकार प्रातःकाल हो गया। अब मुसलमान लोग भी बड़ी वीरता के साथ लड़ने लगे ; पर जले हुए राजपूतोंके सामने वे ठहर न सके, पीछे खिसक गये।

साथ ही "एक लिंग की जय" का शब्द चारों ओरसे होने लगा। वीरसिंह सीसोदिये वीरकुमारके न रहने पर भी, इस वीरतासे लड़े कि, मुसलमानोंके पैर उखड़ गये। वे पीछे हटते थे और विजयिनी सेना उनका पीछा करती थी। मुसलमान हटते-हटते, उस पहाड़ी छोटे रास्तेसे होकर चले, जिस पर माधोसिंहके पाँच सहस्र सैनिक थे। जैसे ही यवनोंने उस दर्रे में पैर रखा कि, एक ओर से बिगुल बजा और लोगोंने देखा, कि कुमार मणिसिंहके साथ आ रहे हैं। अब क्या था। कुमारको देखते ही सिंहोंने जयध्वनि की और यवनों पर आक्रमण कर दिया।

यवनों की अस्सी सहस्र सेना, उस दर्रे से पार होते-होते, माधवसिंहकी, ऊपरसे की हुई पाषाण-वर्षासे ध्वंस होने लगी। मुश्किलोंसे जैसे दर्रा पार किया, तो उधर राणाकी सेनासे सामना हो गया। खूब मारकाट मची। मुसलमान लोग भी अपने

सेनापतिके प्रोत्साह-वचनोंसे उत्तेजित हो खूब लड़े ; मगर कब तक ? उनकी आधी सेना इस लड़ाईमें कट मरी। जो शेष रहे, वे जिधर सींग समाये भाग पड़े। मुहम्मद शाह क़ैद होनेसे बाल-बाल बचे। राजपूतों ने भी पीछा करना छोड़ दिया।

सीसोदियोंने राणाकी जयघोषणा करके कमर खोल दी। उसी मयदानमें सारी सेना इकट्ठी होगयी। डेरे-डण्डे खड़े होगए। कुमार बहुत कुछ घायल होगए थे ; अतः वे भी वहीं पलँग पर लिटा दिये गये। आजका दिन भी समाप्त होगया।

सातवाँ परिच्छेद

चूड़ाजी इस लड़ाईमें बहुत आहत होगए हैं। वे पलँग पर लेटे हैं। ज़र्राह लोग मरहम पट्टी कर रहे हैं। सिरहाने महाराणा और उधर सेनापतिगण बैठे हैं। इधर कृष्णसिंहके हाथमें पट्टी बँधी है। महाराणाने पूछा, "क्यों कुमार! तुम को जब वह मनुष्य अचेत कर ले गया, तो इतनी जल्दी क्यों कर तुमने छुटकारा पाया?"

कुमार—पिता जी! बेहोश होजानेके बाद तो मुझे कुछ भी ख़बर नहीं; पर उसके बादका समाचार मणिसिंहसे पूछें। इसी नव योद्धा के कारण हमारी और नारायण की प्राण-रक्षा हो सकी है।

महाराणा—(मणिसिंहकी ओर फिरकर) हे युवा वीर! तुम्हारी वीरता ने हमलोगों को मोह लिया।

मणि—(हाथ जोड़ कर) यह दास किसी योग्य नहीं।

महाराणा—वीर! तुम रातकी बीती कुल कथा हमलोगोंको सुनाओ।

मणि—महाराज! जबसे मुझे कुमारजीने सेनापतिकी पदवी दी, तबसे मैं कुमारके शिविरकी घूम-घूम कर चौकसी करता हुआ शरीर-रक्षकका काम करने लगा। रात तीन पहर जाते-जाते, मुझे चोरके आनेकी आहट मिली। मैं और भी सचेत हो घूमने लगा।

थोड़ी देरमें क्या देखता हूँ कि, कोई धीरेसे तम्बू फाड़कर कुमारके खीमेमें घुस गया। मैंने सोचा कि शायद चोरी की नियत से आया होगा, सैनिकों को जगाना अनुचित समझा। थोड़ी देर बाद, फिर मुझे उसका कुछ पता भी नहीं चला। न जाने कब वह निकल भागा। मैं घबरा कर जो भीतर गया, तो देखता हूँ, कि, कुमार का पलँग खाली है। अब तो मेरे सिरका पसीना अगूँठे पर आगया।

वहाँ से बेतहाशा जङ्गलकी ओर, जिधर चोरके जानेका शक था दौड़ा। अधिक दूर नहीं गया होऊँगा कि, पत्तोंकी मरमराहट और अस्त्रोंकी झनकारसे अनुमान होने लगा कि, दो मनुष्योंमें तलवार चल रही है। दबे पाँव आगे बढ़ा, तो देखता हूँ कि, एक मशालका जला हुआ टुकड़ा पृथिवी पर पड़ा भुकभुक कर रहा है और उसी की धुँधली रोशनीमें नारायण सिंह और दो यवन लड़ रहे हैं।

नारायण सिंह बहुत आहत होगए थे। मैं आगे बढ़ कर जो लपका, तो यवनोंने जाना कि, बस नया सहायक आ पहुँचा। बडे-बड़े यत्नसे, वहाँ पर पड़े हुए, कुमार और नारायण

सिंहको सचेत कर सेनाकी ओर ले आया। उसके बाद जो कुछ हुआ, आपको मालूम ही है।

यह सुनकर महाराणा बड़े प्रसन्न हुए और अपने सेनापतियों को लेकर अपने शिविरमें चले गये।

अब वहाँ केवल कुमार, नारायण और मणिसिंह रह गये और परस्परमें बातचीत करने लगे।

कुमार—मणिसिंह तुम हमारे प्राणोंके रक्षक हो; अतः हमारा रोम-रोम तुम्हारा ऋणी है; तुम कुछ माँग कर मुझे उऋण करो।

मणि—(हाथ जोड़कर) कुमार जी! इतनी कृपा ही इस दासके लिये बहुत है।

कुमार—नहीं मित्र! तुम कुछ अवश्य माँगो।

मणि—यदि आपकी ऐसी ही कृपा है, तो अपने स्मारक स्वरूप अपने हाथकी वह मुद्रिका, जिस पर एक छोटी सी तस्वीर है, कृपा कर दें। इसकी पूजा मैं सदा किया करूँगा।

कुमार—(बहुत सोच-विचार कर) मणि! यह मुद्रिका मेरे एक मित्रका स्मारक है। इसे छोड जो माँगो, दूँ।"

मणि—कुमार! मैं प्रसन्न हूँ, रहने दें।

कुमार—नहीं, नहीं, मणि! तुम उदास मत हो। लो, यह मुद्रिका तुम्हें भेंट है, पर इसे किसीको देना नहीं।

बातचीत हो जानेके बाद, नारायण और मणिसिंह दूसरे खोमेमें आराम करनेको चले गये। अभी कुमार बैठे-बैठे उमा

का स्मरण कर रहे थे कि, इतनेमें नारायणसिंह दौड़ते हुए आये और बोले, "कुमार! एक आश्चर्य्यकी बात हो गयी है।"

कुमार—(चौंककर!) क्यों! क्या हुआ!

नारायण—यह देखिये, आपके नामकी एक चिट्ठी हम-लोगोंको अभी पूर्व वाले जङ्गलमें गिरी मिली है। आपका नाम देख खोली नहीं।

कुमार—हैं? मेरे नामका पत्र जंगल में?

नारायण—जी हाँ। यह लीजिये।

पाठकोंके मनोरञ्जनार्थ, पत्रका साराँश हम नीचे दिये देते हैं:—

"कोई धर्म्मात्मा पत्रको चूड़ाजीके पास पहुँचा देवे।

"आर्य! आप राजपूतकुल-चूड़ामणि हैं, हिन्दू-कुल-शिरो भूषण हैं। मैं आपकी दासी हूँ। यदि नितान्त विपन्ना नहीं होती, तो आपको पत्र लिखनेका साहस नहीं करती। विपत्ति-विधुरा जानकर मेरा दुःसाहस क्षमा करेंगे।

"कुमार! अनुग्रह पूर्वक मेरी दुःख-कहानी श्रवण कीजिये। मैं कल देव-पूजाको मन्दिरमें गई थी। वहाँ से लौटती बार मैं दुष्ट यवनोंके हाथ पड़ गयी। वे मेरे सारथीको मार, मुझे मेरी एक दासीके साथ लिये जाते हैं। मैं कहाँ जाऊँगी, यह विदित नहीं। सुननेमें आया है कि, आप इन दिनों कहीं इसी आस-पासमें ससैन्य हैं; अतः! यह पत्र गिराये जाती हूँ यथोचित कृपा करेंगे। आपकी दासी

उमा।"

इस पत्र को पढ़ते ही कुमार एकदम स्तब्ध होगए, और सोचने लगे कि, अब इस समय क्या उपाय करूँ ।

वीरोंकी बुद्धि दुःखमें और भी प्रखर हो जाती है। उन्होंने धर्य्य धरकर नारायणसिंहसे कहा, "मित्र ! अभी हमारे पाँचसौ चुने वीरोंको इकट्ठा करो, मैं आज निरपराध आर्य-ललनाके अपमानका बदला यवनोंसे अपने खड्गकी धार द्वारा लूँगा।"

कुमार तुरत पिताके निकट आज्ञा लेनेको चले गये ।

इस समय महाराणा किताब पढ़ रहे थे। आहत कुमारको असमय आते देख घबराकर पूछा, "क्यों कुमार ! कुशल तो है ?"

कुमारने सब वृत्तान्त सुनाकर आदेश माँगा ।

राणा—बेटा ! 'जो हट राखे धर्म्मकी तेहि राखे कर्त्तार ।' तुम अवश्य राजकुमारीके उद्धारका उपाय करो, मैं अत्यन्त सन्तुष्ट हूँ ।

कुमार प्रणाम कर विदा हुए ।

कुमार आहत होनेपर भी युद्ध-वस्त्र पहनकर घोड़ा कुदाते जा पहुँचे और मणिसिंह तथा नारायणसिंहको ससैन्य सज्जित पा बढ़नेकी आज्ञा दी ।

मणिसिंहके चेहरे पर शोक और घबराहटका चिह्न झलक रहा था। उसने बढ़कर कुमारसे एक आवश्यक कार्य्य का बहाना कर छुट्टी चाही। कुमारने अनुमति दे दी। छुट्टी पाकर मणिसिंह चला गया ।

अब कुमार सेना-सहित वनकी पगडण्डी खोजते वनमें घूमने लगे ।

हाय! अभी तक मालती नहीं आई। कहीं बेचारी मेरे वास्ते शत्रुओंके हाथ तो नहीं पड़ गयी। हाय! निःसन्देह उसने मेरे वास्ते जान-जोखिमका काम किया है। माँ भवानी! यदि मालती सकुशल लौट आई और उसका शुभ समाचार मिला, तो मैं तुम्हारी यात्राकर पूजा करूँगी। तुम मेरे भविष्य-सुखकी रक्षा करो; तुम अभयदायिनी जगदम्बा हो।

हाय! कुमार जिस समय मैंने सुना कि, यवनोंके साथ लड़ते हुए आप कैद हो गये, उस समयका हाल क्या कहूँ, पाँवोंके नीचेकी मिट्टी निकल गई। आँखोंके आगे अँधियारी छा गई। मैंने समझ लिया कि मेरी ज़िन्दगीके दिन भी पूरे हो गये। हाय! हाय! मैं किससे बातें कर रही हूँ? मैं पागल तो नहीं हो गई? नहीं, नहीं, मैं पागल नहीं हुई। ये विश्वव्यापिनी वायु अवश्य कुमारसे जाकर कह देगी कि, तुम्हारे वियोगमें तुम्हारी दासी उमामोहिनी अपना बुरा हाल बनाये हुए है। क्षण-क्षण में उमामोहिनीकी बचैनी बढ़ती जाती

थी। वह लाख-लाख अपनेको सम्हालती ; परन्तु चूड़ाजीकी याद आ-आकर उसे तड़पा देती थी। उसकी आँखोंमें आँसू भर आते और साथ ही हिचकियोंके तार भी बँध जाते थे। इस समय उसकी विचित्र दशा है, आँसुओंसे दोनों कपोल भींग गये हैं। माथेके बिखरे अलक-जाल भी, जो पलकोंसे उलझ रहे थे, भींग गये हैं। रेशमी साड़ीका पल्ला तो बिल्कुल गीला हो रहा है।

वह इस दशामें दीवारसे सहारा लगाये बैठी थी कि, इतनेमें एक लौंडीने आकर हाथमें एक पत्र दिया। यह पत्र मालतीका भेजा हुआ था ; इसमें साधारण कुशल-समाचारके बाद केवल इतना ही लिखा था कि, अब कुछ ही दिनोंमें वह कुमारके संग आया चाहती है। इस पत्रको पढ़कर उमा-मोहिनी अत्यन्त प्रसन्न हुई और अपनी मानताके अनुसार एक सखीको साथ लेकर मन्दिरको रवाना हुई। रथ देव-मन्दिर के द्वार पर पहुँचा, और इन दोनोंने उतरकर प्रेमसे माताकी पूजा की। उमामोहिनी माताके पैरों पर सिर रखकर कुमारके विजय पानेके लिये वर माँगकर लौटी। लौटकर ज्योंही वे दोनों रथ पर चढ़ीं कि, साथ ही एक ओरसे एक तीर सनसनाता हुआ सारथीको लगा। बेचारा सारथी निर्जीव होकर पृथिवी पर धमसे गिर पड़ा। उन तीर चलानेवालोंमेंसे एकने रथके मोढ़ेपर बैठ, रथ हाँक दिया। रथ दौड़ता हुआ चल निकला। बेचारी उमामोहिनी बदहवास होती

जाती थी, लेकिन उसकी दासी श्यामा बड़ी चतुरा और ढीठ था। उसने कुमारीको चुप कराया और कहा,—"प्यारी! राओ मत। देखो तो मैं इन नीच यवनोंकी दाढ़ी पर क्योंकर थूकती हूँ।" इतनेमें रथ एकाएक रुक गया। श्यामाने सिर निकालकर देखा, तो एक बड़े भारी जङ्गलमें बहुतसे ख़ीमे खड़े पाये। एक यवनने आकर पूछा—"कुछ चाहिये?"

श्यामा—क्यों साहब! आप हमलोगोंको क्यों लिये जा रहे हैं, तथा कहाँ ले जायँगे?

यवन—हमारे मालिक जनाब मुहम्मदशाह लोदीकी नज़र आपकी कुमारीपर पड़ी, जब कि वे राजपूतोंसे हारकर भागे जाते थे और कुमारी कोठे पर खड़ी होकर बाल सुखा रही थीं। मालिकने आपके यहाँकी एक लौंडीको, जिसका नाम शायद चन्द्रबीबी है, मिलाकर कुमारीकी हालत पूछी। उसने हमलोगोंको ख़बर दी कि, आप पूजा करनेको आ रही हैं। हमलोग तो बराबर आपके लिये तैयार रहते ही थे, बस गाड़ी-वानको मार कर ले चले।

श्यामा—ठीक है, अच्छा भई! ज़रा यह तो बतलाओ कि, ये ख़ीमे किसके हैं?

यवन—क्या आप नहीं जानती हैं कि, ये काफिर राजपूतोंके ख़ीमे हैं? इन्हीं कमबख़्तोंने हमारी फौजको हरा कर भगा दिया। अल्लाहका ग़ज़ब इन लोगों पर पड़े!

श्यामा—वाह! मौलवी साहब वाह! अपनी नामर्दोंसे

हारे, तो इन बेचारोंका क्या दोष है, जो इन लोगोंपर ग़ज़ब गिरा रहे हैं। अच्छा, इनके सरदारका क्या नाम हैं, जानते हो ?

यवन—हाँ, इनके सेनापतिका नाम चूड़ाजी और कृष्ण-सिंह है।

श्यामा—अच्छा, तो हम आपसे कुछ बातचीत करेंगी। इस समय शायद कोई सुन लेगा। श्यामाने झटसे परदा गिरा दिया और कुमारीसे कहा कि, आप जल्दीसे एक पत्री लिख कर यहाँ गिरा दें। शायद हमलोगोंके भाग्यसे कुमारको पत्री मिल जाय। परन्तु यहाँ दवात-क़लम कहाँसे आवे ? अच्छा, कुछ परवाह नहीं, मेरे पास एक जस्तेकी पेन्सिल है। आप इस काग़ज़पर शीघ्रतासे कुछ लिखकर डाल दें, तब तक मैं इस दुष्टसे दो एक बातचीत करूँगी। उमामोहिनीने पत्र लिखकर डाल दिया, जो भाग्यवश नारायणसिंहके हाथमें पड़ा था, यह पाठक जानते ही हैं।

श्यामाने फिर भी उस यवन-सरदारको पुकारा ; लेकिन उसने कहा,—"हुज़ूर ! हमलोग यहाँपर ज़ियादा देरतक नहीं ठहर सकते ; क्योंकि दुश्मनोंका ख़ौफ है।" यह कहकर उसने रथ चला दिया। श्यामा रास्ता अच्छी तरहसे ग़ौर करती जाती थी। एक घण्टेके बाद, रथ जाकर एक बड़े भारी ख़ीमेके द्वारपर खड़ा हुआ। यवन-सरदारने भीतर जाकर देखा, तो बड़ी भारी मसनदसे सहारा लगाये मुहम्मद लोदी बैठा है। वहाँ जाकर, झुककर सलाम करके वह हाथ जोड़ खड़ा हो गया।

मुहम्मद आनन्दसे उठ बैठा और बोला, "क्यों फैयाज़! क्या तुम उस परी पैकर को हासिल कर लाये?

"जी, हाँ—हुजूर की दुआ से सब ठीक है।"

मुहम्मद—बेहतर, उसे लेजाकर हिफ़ाज़तसे रक्खो। मैं रातके वक़् बातचीत करूँगा।

फैयाज़ने भी सलाम करके, उमामोहिनी वगैरः को उतार कर बड़ी-शान-शौक़तसे सजे हुए एक खीमेमें, जो सिर्फ उमाके लिये ही सजाया गया था, रक्खा।

अब इधर का हाल सुनिये।

जब मालतीने इस समाचार को सुना, तो कुमार की सेना से अलग होकर सीधी सिलीन को गई। वहाँ जाकर कुमारी को सचमुच ही न देखकर, रोती हुई महाराज भीमसेन सिंहके यहाँ आई और सब हाल कह सुनाया। जिसे सुनते ही बेचारे, अपनी एक मात्र कन्याके खो जानेसे, व्याकुल हो गये। मालतीने कहा, "महाराज! आप घबरायँ नहीं, मुझे एक सहस्र सैन्य देवें। मैं जाकर अभी कुमारी को खोज लाती हूँ। महाराजा भीमसेनसिंह मालतीको उमा मोहिनी की भाँति मानते थे। उन्होंने कहा—"बेटी! जा, एक सहस्र सैन्य अलखसिंह सेनापतिके अधिकारमें लेक कुमारी का सुराख़ लगा।"

मालती चली गई और रनवास में जाकर सब लौंडियों की हाजिरी ली, तो चन्द्र को नहीं पाया। उसी पर

उसको शंका हुई। उसने वहाँसे अलखसिंहके पास जाकर उन्हें महाराज का आज्ञापत्र दिया। वे तुरन्त एक सहस्र सैन्य लेकर मालतीके संग चल पड़े। पाठक! यह जान लें कि, उमा-मोहिनी की माताको परलोक हुए कई साल हो गये थे। मालती अपने उसी भेषमें यानी मणिसिंहके भेषमें चली और सब सैन्य को एक जङ्गल में डेरा डलवा कर, आप सूराख़ लगाने लगी। मुहम्मद लोदी की सैन्य भी मालती की सैन्यके निकट ही जङ्गलमें थी। मालती एक देहाती के वेश से सजकर बाज़ार में घूमने लगी। घूमती-घूमती जब बहुत दूर निकल गई, तो देखा कि एक मुग़ल-सैन्यका मनुष्य उसी ओर आ रहा है। यह भी आगे बढ़ गई और इसने उस यवन को सलाम किया। उसने सलामका जवाब देकर कहा—"ओ बे! इधर आ।" यह भी मौक़ा देखकर बढ़ गई। उसने अपने हाथकी मुटरी इसको दी और कहा कि, मेरे पीछे-पीछे आ। मालती मनही मन प्रसन्न हुई और सोचने लगी, कि अब शायद काम सधेगा।

मुग़ल—क्यों बे! तेरा नाम क्या है?

मालती—चुन्नी। (पाठक अब हम मालतीको चुन्नी कह कर सम्बोधन करेंगे।)

मुग़ल—आहा! क्या नाम है चुन्नी! किस चीज़ की? राजपूतोंकी हड्डीकी या चावलकी?

चुन्नी—सरकार मालिक हैं, जो चाहें सो कहें।

उस मुग़लने बाज़ारमें घूम-घूमकर बहुत सी चीजें ख़रीदीं। जिनमें कुछ खाने-पीनेकी चीज़ें भी थीं। चुन्नीने फुर्तीसे कुछ बेहोशी की दवा तरकारीमें डाल दी। मुग़लने सब चीज़ लेकर कहा—"अरे चुन्नी! जाकर सरायसे एक बधना पानी तो ला।" चुन्नी भी "अच्छा" कह कर घूमघाम कर वापस आया और कहा कि, भटियारा तो देता ही नहीं। यदि आज्ञा हो, तो यह दास सरकारको अपने घर पर ले चले। मेरा घर यहाँसे अत्यन्त निकट है।

मुग़ल—अच्छा चलो, मुझे बड़ा शिद्दत की भूख लगी है।

चुन्नी उसको घुमाता-फिराता शहरके बाहर ले गया और वहाँ एक कोठरीमें जो उसने निज कार्य्य-साधनार्थ ठीक कर रखी थी, उसे ठहरा कर, पानी वगैरः सब ठीक कर दिया।

बेचारे ख़ाँ साहिब क्या जानते थे, कि अब उनको कुछ रोज़ इस सुन्दर कोठरीकी हवा खानी होगी। ख़ाँ साहिब ख़ूब तारीफ़ करके खाते थे। खा-पीकर बैठे, तो सिर घूमने लगा। बोले, "क्यों चुन्नी! सिर क्यों घूमता है?"

चुन्नी—हुजूर, बहुत खा गये होंगे।

"अरे, रे, रे, हैं, यह क्या!" कहते-कहते ख़ाँ साहिब तो लम्बे हो गये।

चुन्नीने झट इनकी सब पोशाक उतार कर आप पहन ली और ख़ाँ साहिब की दाढ़ी और मूँछ मूँड़कर सिरके सब बाल भी मूँड़ डाले। इसके बाद एक बिसटी पहिना कर उन्हें

खम्भेसे बाँध दिया और होशमें लाकर लगा जूता पटकाने। ख़ाँ साहिब रोते थे; बिलखते थे; लेकिन चुन्नीने वह मार मारी कि, ख़ाँ साहिबके दिमाग़में गरमी आ गई। चुन्ना जूता मारते-मारते यह भी कहता जाता था, क्यों ख़ाँ साहिब देखिये मैं किसको हड्डीकी चुन्नी हूँ। ख़ाँ साहिबने रोकर कहा—"भाई क्यों मारते हो?"

चुन्नी—"अच्छा, तुम्हें मैं एक शर्त पर छोड़ सकता हूँ। सच-सच बतलादो कि, आज कल तुम्हारी फ़ौज़में कोई नया आदमी भी आया है?"

ख़ाँ—हाँ भाई, दो औरतें आई हैं, जिन्हें नवाब साहिब अपनी बेगम बनावेंगे और उन लोगोंने क़बूल भी कर लिया है। परसों जश्न होगा।

चुन्नी ख़ाँ साहिब से यह बात सुन कर अति प्रसन्न हुआ और फिर उनको बेहोश करके, घरमें ताला लगा कर, कोतवालीमें जाकर कह आया कि, मेरे घरमें चोर घुसा है। कोतवालीवाले चोरका नाम सुनते ही दौड़ पड़े और ख़ाँ साहिबको जुतियाते कोतवालीमें ले गये।
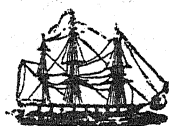
नवाँ परिच्छेद

सूर्य्यं भगवान् अस्ताचल अवलम्बी हुए हैं। पूर्व्वकी ओर ललाई दृष्टि आती है। एक बड़े भारी खीमेमें बहुत सी सेना चुपचाप सज्जित हो रही है। बाहरके मनुष्य नहीं जानते कि, खीमेमें क्या हो रहा है। उस खीमेके निकटस्थ ऊँचे पहाड़ पर कई जन महावीर खड़े हैं। उस पहाड़ की चोटीसे कैसी शोभा दृष्टि आती है! पहाड़के नीचे नदी प्रवाहित है। उस नदीके किनारोंने, वसन्तकालके नव पुष्प एवं दूर्बादलोंसे सुशोभित हो, अति मनोहर रूप धारण किया है। उत्तर की ओर बहुत दूरतक, सुन्दर हरे-हरे खेत सूर्य्यं की किरणों के पड़नेसे उज्ज्वल दिखाई देते हैं। विस्तारसे बसी हुई सुन्दर नगरी शोभा पा रही है। वे योद्धागण इसी ओर देखते हुए यह चिन्ता करते हैं कि, आज इस जङ्गलमें क्या भयङ्कर घटना होगी। कोई दक्षिण ओर, कोई पश्चिम ओर देखते हैं। ऊँचे पर्व्वतोंके पीछे ऊँचे पर्व्वत, जहाँ तक दृष्टि पहुँचती है, वहाँ तक अनन्त पर्व्वत-श्रेणी और नील आकाश ही दृष्टिगोचर होता है तथा अस्ताचल चूड़ा-

वलम्बी सूर्य्य नारायणकी किरणें अपूर्व्व शोभा धारण कर रही हैं। परन्तु हम जानते हैं कि, ये वीरगण इस अनुपम पर्व्वतके दृश्यको नहीं देखते; वरन् कुछ और ही चिन्ता करते हैं। जिस संग्रामसे या जिस बड़े साहसके कार्य्यसे एक कालहीमें बहुत दिनोंका चाहा हुआ फल मिलता है या एक ही बारमें सत्यानाश हो जाता है, उसके प्रातिकालमें मुहूर्त्तमात्रके लिए अतिशय साहसवाला हृदय भी चिन्तापूर्ण और स्तब्ध हो जाता है। आज मुहम्मद शाह लोदी और मुग़लोंकी सेना छिन्न-भिन्न और पराजित होगी या विजय साहससे देदीप्यमान राजपूत-सूर्य्य एक बार ही चिर अन्धकारमें छिप जायगा,—इसी प्रकार की चिन्ता इन योद्धाओंके हृदयमें खलबली मचाती है। किसीने इस चिन्ताको प्रकट न किया। सब यही कह रहे थे कि, भवानीके आशीर्वादसे अवश्य जय होगी। तोभी जब एक-एक योद्धा दूसरे योद्धाकी ओर देखने लगे, तब किसीके मनका भाव छिप न सका। केवल ५०० सेना लेकर चूड़ा जी अगणित शत्रु-सेनाके मध्यमें जाकर चढ़ाई करेंगे। ऐसे भयङ्कर कार्य्य को कभी चूड़ाजीने किया था या नहीं, भगवान् ही जानें। फिर भला, क्यों नहीं वीरोंके ललाट पर एक क्षणके लिये चिन्ता रूपी मेघ छा जाय? उस वीर मण्डलीमें बहुदर्शी नारायण सिंह भी थे। यह बालकपनहीसे चूड़ाजीके सङ्गी थे और अनेक युद्धोंमें वीरता दिखाकर इनके दाहिने हाथ हो गये थे। जब

चूड़ाजीने मुग़लोंसे लड़ाई की थी, तो यही प्रधान सेनापति थे ।
यह युद्धमें साहसी, विपद्में स्थिर और अविचलित, परामर्शमें
बुद्धिमान और दूरदर्शी थे । नारायणसिंहसे अधिक कार्य्यमें
चतुर कर्म्मचारी वहाँ चूड़ाजीका यथार्थ बन्धु और कोई न था ।

सूर्य्य अस्त हो गये हैं । सन्ध्याकी छाया धीरे-धीरे जगत्में
उतरती जाती है । वीर मण्डली अबतक पर्व्वतके ऊपर खड़ी
है । इतनेमें चूड़ाजी वहाँ आकर उपस्थित हुए । उनका
वदन-मण्डल गम्भीर और दृढ़ प्रतिज्ञासे पूर्ण था ; परन्तु
भयका लेशमात्र दृष्टि नहीं आता था । उनके नेत्र उज्ज्वल थे
और वे वस्त्रके नीचे बख़्तर और अस्त्र लगाये हुए थे । आज
रात्रिमें बड़े भयङ्कर कार्य्यके करनेको तय्यार हुए थे । उनकी
दृष्टि अविचलित थी । वे बोले—"सब ठीक है, भाइयो !
विदा दो ।" कुछ देरतक सब चुप रहे । फिर नारायण सिंह
बोले, "क्या आप ठीक कर चुके कि आज रात्रिमें मैं या ये वीर-
गण आपके सङ्ग जाने नहीं पावेंगे ? महाराज ! विपद्कालमें
कब हमने आपका साथ नहीं दिया है ?"

चूड़ाजी—मित्र ! मुझे क्षमा कीजिये और अधिक कहने
की आवश्यकता नहीं । आप लोगोंका साहस, विक्रम और
विद्वत्ता मुझ पर भली भाँति विदित है ; किन्तु आज क्षमा
कीजिये । भवानी की कृपासे आज मैंने बड़ी प्रतिज्ञा की
है । या तो यह कार्य्य साधना ही होगा या इन अकिञ्चन
प्राणोंको ही न रक्खूँगा । आप लोग आशीर्वाद कीजिये

कि, जय-लाभकर एक विनीत बालिकाकी रक्षा कर सकूँ। यदि अमङ्गल हो और आजके कार्य्यमें मेरे प्राण जायं; तथापि आप लोगोंके रहनेसे राजपूत सब कुछ कर सकते हैं। यदि आप लोग मेरे साथ प्राण देदेंगे, तो देश किसके बुद्धिबल पर रहेगा? स्वाधीनता किसके बलसे रहेगी? हिन्दू जाति की रक्षा कौन करेगा? अब यात्राकालमें और कुछ न कहिये।

महाराणा लाखाजी सेनापति वीरसिंहके मित्र थे। वीरसिंह उस समय कुछ कहना व्यर्थ समझ चुप रह गये। चड़ाजी वीर-सिंहसे बोले, "प्रिय वीरसिंह! आपने पिताके निकट काम किया है; अतएव आप मेरे पितृ-तुल्य हैं। आशीर्वाद दीजिये कि आज जय-लाभ हो।" बड़ोंका आशीर्वाद अवश्य ही फलता है। सबने नत्रोंमें नीर भर कर विदा दी।

फिर चूड़ाजी बोले-"नारायणसिंह! प्यारे बालकपनके मित्र! विदा दो।" दोनों खेदके मारे कुछ काल चुप रहे। फिर नारायण बोले, "किस अपराधसे मुझे आप साथ नहीं ले चलते? वह कौन सा व्योरा है या कौनसा युद्ध है? मैं किस समय आपके साथ नहीं गया? पहली बात स्मरण कर देखिये, मेवाड़ देशमें आपके साथ कौन फिरता था? पहाड़ोंकी चोटियों पर, तलैटियोंमें, पर्व्वतोंकी कन्दराओं और नदियोंके तीरपर कौन दिनमें आपके साथ शिकार करता और रात्रिमें एक साथ सोता था और दुर्ग जीतनेका परामर्श कौन करता था? आज्ञा दीजिये कि, मैं भी आपके साथ चलूँ, आपके

मंगल और अमंगलमें साथ हो, जन्म सुफल करूँ। आप ही विचार कर देखिये कि, हमारे इस स्थान पर जीवित रहनेसे कुछ उपकार नहीं हो सकता। मुझको राजकार्य्यमें सहायता देनेकी बुद्धि नहीं। आप अपने बालमित्रको निराश न कीजिये।" चूड़ाजीने देखा कि, नारायणके नेत्रोंमें जलभर आया, तब उन्होंने मोहित हो नारायणसिंहसे भेंट करके कहा—"भ्राता! "मोरे नहिँ अदेय कछु तोरे" शीघ्र चलनेको तैयार हो जाओ।" दोनों जने वेगसे पर्व्वतके नीचे उतरे। जहाँ वर्षा-कालके सायङ्कालीन काले-काले बादलोंके समान सेना सज रही थी। चूड़ाजी खीमेमें गये। समस्त सेना सजी सजाई तैयार थी। चूड़ाजी चुपचाप घोड़े पर चढ़े और सेना चुपके-चुपके चल निकली। खीमेके द्वारके निकट एक छोटी उम्र-वाले योद्धाने चूड़ाजीके सम्मुख आ सिर नवाया। कुमारने पहचान कर पूछा, "ऐ मणिसिंह! तुम कहाँ थे और तुम्हारी क्या प्रार्थना है?"

मणिसिंह—जिस दिन दासने आपके प्राणोंकी रक्षा की थी, उसदिन आपने प्रसन्न हो कहा था कि, जो कुछ तुम चाहोगे, तुम्हें दूँगा।

चूड़ा—आज इस कठिन कार्य्य-प्रारम्भमें क्या पुरष्कार लेने आये हो, मणि?

मणि—यदि आज्ञा हो तो मैं भी साथ चलूँ, बस यही निवेदन है।

चूड़ा—कुछ सोच कर, अच्छा चलो !

यह कह कर सेना चल खड़ी हुई। पाठक सोचते होंगे कि, मणिसिंह तो उधर ख़ाँ साहिब की दुर्गति करने चला था, इधर ठीक समय पर कैसे पहुँच गया। पाठक कुछ देर सब्र करें, सब मालूम हुआ जाता है कि, मणिसिंहने क्या-क्या किया। यह सेना चुपचाप बढ़ती हुई मुहम्मद शाह लोदी की सेना के निकट पहुँच गई। आज ही का दिन जशन का है, पाठक जिसका ज़िक्र ख़ाँ साहिब के मुखसे सुन चुके हैं। आज चारों ओर नाचरङ्ग हो रहा है। सब सैनिक गण शराब-कबाब उड़ानेमें मस्त हैं। किसीको भी यह ख़बर नहीं कि, सिर पर ही राजपूतों की पैनी तलवार झूम-रही है।

चूड़ाजीने मणिसिंहसे पूछा कि, कहो मित्र! यह क्या होता है ? मणिसिंहने ख़ाँ साहिब को कैद करने से लेकर सब हाल कह सुनाया। जिसे सुनते ही चूड़ा जी उमामोहिनी के दुःखसे दुःखित होने पर भी हँस पड़े और गलेकी एक माला मणिसिंहको पहना दी। मणिसिंहने कहा कि, इस समय बेचारी उमामोहिनी दक्षिण वाले ख़ीमेमें हैं। यदि आज्ञा दीजिये तो पहिले उस बेचारी को छुड़ा लूँ। उसके बाद आप लड़ाई में इन दुष्टों को हराकर उल्लू बनावें।

चूड़ाजी—अच्छी बात है। मणिसिंहने ५० वीरों के सङ्ग दक्षिण वाले ख़ीमेमें, जहाँ कि उमामोहिनी और श्यामा बेचारी

बेबस पड़ी थीं, धावा किया तथा कुछ प्रहरियों का जो नींदमें ऊँघ रहे थे, मार-मार कर उमामोहिनी और श्यामाको निकाला। उमामोहिनी बेचारी घबरा गई, कहीं दूसरी आफ़त तो नहीं आई ; परन्तु मणिसिंहने अपना परिचय देकर सन्तोष दिया। उमामोहिनीने कहा,"प्यारी सखी ! यदि भगवान् सखी दें, तो तेरे सरीखी।" मणिने ५० सवारोंको कुमारकी मदद के लिये भेज कर आप एक रथपर उमामोहिनी और श्यामा को चढ़ा कर कह दिया कि, तुम लोग अभी रथ हाँकते हुए चले जाओ, जिसमें किसी को मालूम न हो। सब ठीक कर मणिसिंह भी रथ की ओर चल पड़ा। इधर युद्ध आरम्भ होगया था। चूड़ाजी के सब साथी इस खेमेके कोने-कोनेको देख चुके थे। आते ही सबके सब म्लेच्छोंपर टूट पड़े। कोई किसी की कोठरी में आदमियों को गाजर मूली की भाँति काटने लगा, किसी ने किसी कमरे का द्वार घेरा। उस समय यवन-सेनामें हलचल मच गयी ; किन्तु चूड़ाजी सबसे अलग हो, उस ख़ेमेकी ओर चले, जिसमें मुहम्मद लोदी शराब पी रहा था। कुमारने पहुँचते ही एक हाथ इस ज़ोरसे तलवार का मारा कि, उसका सिर धड़से अलग हो गया ; परन्तु ज्योंही कुमारकी तलवार हवामें उठी—त्योंही एक स्वदेश एवं स्वामिभक्त वीर तलवारके सामने खड़ा हो गया। कुमार की तलवार तो चल चुकी थी, फिर वह कब रुकने वाली थी ? उसी वारने उस बेचारे वीरका वारान्यारा

कर दिया। पाठक जानलें कि, यह वीर वही मुहब्बत ख़ाँ है, जिसे एक बार मुहम्मद लोदीने अनादर करके रञ्ज कर दिया था। वाह रे वीर! तू धन्य है। तूने स्वामीके लिये इस तरह अपने प्राणोंको दे डाला। कुमार चकित हो गये और मुहम्मद लोदी दुम दबाकर भागा और सीधा उमा के ख़ीमे की ओर चला गया; परन्तु वहाँ तो मणिसिंहने हाथ साफ़ किया था। जब मणिसिंह उमामोहिनीको लेकर चलने लगा, तो उसे दिल्लगी सूझी। उसने अपने सिपाहियों की मदद से दो यवनों को पकड़ उनकी जीभ पर एक मसाला मल दिया, जिससे वे बोल न सकें। उन दोनों को उमामोहिनी एवं श्यामा की पोशाक पहिना, बेहोश कर छोड़ दिया। जब मुहम्मद लोदी ख़ीमेमें पहुँचा, तो झटसे तलवार निकाल कर एक ही हाथमें दोनों को साफ़ कर दिया। लेकिन जब उन लोगों के मुख पर का वस्त्र हटा कर देखा, तब हाय! करके बैठ गया। देखा तो उसके दोनों लड़के हैं, जिन्हें यह प्राणोंसे भी अधिक प्यार करता था। परन्तु अब क्या कर सकता था, वहीं बेहोश हो गया। उधरसे राजपूतोंने आकर उसे क़ैद कर लिया।

जब कुमार यवनों पर विजय पा चुके, तो देखा कि, मणिसिंहका कहीं पता नहीं। सिपाहियोंसे पूँछने पर ज्ञात हुआ कि, मणिसिंह उमामोहिनी और श्यामाको रथपर चढ़ाकर चल दिया। यह सुनकर कुमार क्रोधके मारे

आगबबूला हो गये और आप ही आप कहनेलगे, "मणि-सिंहने मुझे धोखा दिया। उल्लू बनाकर उमा और श्यामाको ले भागा। जिसके लिये इतनी ख़ून-ख़राबी हुई, वही न मिली।" योंही सोच करते-करते चूड़ाजीने अपने घोड़ेको जंगल की ओर मोड़ा। नारायणसिंह से बोले—"प्यारे बालमित्र! तुम सेनाके साथ पिताजीके पास जाओ और कह देना कि, कुमार उमामोहिनीकी खोजमें गये हैं। प्यारे नारायणसिंह! मुझे विदा दो। यदि उमामोहिनी का पता लगा, तो मणिसिंह को इसका मज़ा चखा, उमामोहिनी को लाऊँगा; नहीं तो अपने प्राण भी दे दूँगा। प्यारे नारायण-सिंह! अब विदा करो। तुम्हारे मित्रपर इस समय दुर्भाग्यकी भारी कृपा हो रही है।" दोनों मित्रोंका हृदय भर आया; परन्तु कुछ बोले नहीं और चूड़ाजीने नारायणसिंहसे बिदा हो, वनकी ओर प्रस्थान किया। कहाँ जायंगे, क्या करेंगे, यह इनको कुछ भी मालूम नहीं। धूप-गरमी की परवाह न कर सीधे चले जाते थे। कहीं पेड़ोंकी डालियोंमें लग कर इनके मस्तकसे रुधिर टपकने लगता था, लेकिन इन्हें केवल उमामो-हिनीकी सुन्दर मूर्त्ति छोड़ और किसीका ध्यान न था। अभी यह कुछ ही दूर गये थे कि, किसीने पीछेसे पुकारा—"कुमार! ज़रा ठहर जाइये।" कुमारने फिरकर देखा तो ज्ञात हुआ कि, एक ब्राह्मण, जटा बढ़ाये, विभूति लगाये आरहा है; परन्तु चेहरेसे तेज और सुकुमारपन टपकता है। उसने निकट आ, हाथ उठा

श्लोक पढ़कर, आशीर्वाद दिया। कुमारने पूछा—"आप कौन हैं ?"

ब्राह्मण—मैं एक ज्योतिषी हूँ ।

कुमार—अच्छा महाराज ! मैं अपने मनमें कुछ रखता हूँ, आप उसका उत्तर दीजिए ।

ज्यो०—(झटसे पोथी निकालकर और कुछ जोड़कर) कुमारजी ! यदि आज्ञा हो तो कुछ कहूँ ।

कुमार—हाँ ज्योतिषी जी, कहिये ।

ज्यो०—जिस स्त्रीसे आप मिलना चाहते हैं, वह अवश्य मिलेगी ; परन्तु इस समय लग्न ख़राब है, अतएव आप यात्रा बदल दीजिये ।

कुमारने गलेसे एक मोतीकी माला उतार ज्योतिषीको दी और कहा—"आप सर्व्वदा मेरी राजधानीमें आया करें ।"

"बहुत अच्छा",—कह ज्योतिषीजी विदा हुए ।

नारायणसिंह सैन्यके साथ कुमारसे विदा हो राणाजीकी सेनाकी ओर चले। थोड़ी ही दूर पर राणाजीकी सेना थी, अतः झट जा मिले और कुमारकी वीरता, मणिसिंहकी धोखेबाज़ी इत्यादिका सम्पूर्ण वृत्तान्त राणासे कह सुनाया। राणाजीने शोकके साथ कहा,—"चूड़ाजी ऐसे वीरको यों एक स्त्रीके लिये व्याकुल होना नहीं शोभा पाता; परन्तु हाँ, अबलाकी रक्षा करना भी क्षत्रिय वीरका धर्म्म है। मैं तो अब चित्तौड़ जाता हूँ, क्योंकि वहाँ भी सारा राज-काज बन्द पड़ा है। नारायण! तुम चूड़ाजीके मित्र हो, इसलिये एक सहस्र सैन्य लेकर यहीं चूड़ाजीके साथ रहो। कुमारको समय पर मदद करना और बराबर, जिस भाँति हो, कुमारके संग रहना।" यह कह राणाने सैन्यको चित्तौड़की ओर प्रस्थान करनेकी आज्ञा दी। सब सैन्य समुद्रकी भाँति लहराती हुई रवाना हुई। नारायणसिंह केवल एक सहस्र राजपूतोंके सङ्ग रह गये। नारायणसिंह अपनी सेनाको अपने सहकारी वीरभद्रसिंहके अधिकारमें सम्पूर्ण रूपसे देकर, आप एक

ब्राह्मण ज्योतिषोके भेषमें रवाना हुए। अब तो पाठक जान गये न कि, नारायणसिंहने ही ज्योतिषी बन कर कुमारको उधर जानेसे फेरा था। कुमार फिरे तो सही, किन्तु अपनी सेनाकी ओर न जाकर दूसरी ओर चल खड़े हुए। यह जाते-जाते सिलौन राज्यको सरहद्में आ पहुँचे। वहाँ नगर के बाहर एक देवीका मन्दिर था। पर्व्वतके एक अति ऊंचे कंगूरे पर देवीजीकी प्रतिष्ठा हुई थी। मन्दिर पर चढ़नेके लिये पत्थरकी बहुतसी सीढ़ियाँ बनी थीं। नीचेसे एक पहाड़ी नदी कल्लोल करती, उमड़ती और मन्दिरकी पेढ़ियों को धोती हुई चली जाती थी। असंख्य यात्री या उपासक-गण इस पुण्यमयी नदीमें स्नानकर देवीजीकी पूजा किया करते थे। ऊपरसे लेकर नीचेतक बराबर वृक्ष ही वृक्ष लगे हुए थे। इस स्थानपर वृक्षोंको सघनताके कारण दिनमें भ अन्धकार रहता था। वृक्षकी छायामें पुजारीगण पर्णकुटियाँ बनाकर रहते थे। इस पुण्यमय रमणीय स्थानको देखते ही मूर्त्तिमान शान्त रसका दर्शन हो जाता था। भारतवर्षकी पवित्र पुराण-कथाओंके शब्द व वेदमन्त्रके अतिरिक्त और कोई शब्द नहीं सुनाई पड़ता था। अगणित युद्ध और हत्याओंसे मेवाड़–भूमि कम्पायमान हो रही थी; परन्तु क्या यवन, क्या हिन्दू, किसीने भी इस शान्तिमय छोटेसे मन्दिरको लड़ाईके कोलाहलसे कलुषित नहीं किया था। एक प्रहर रात बीत गयी चूड़ाजी वहीं झरनेसे पानी पी, देवीके दर्शनको गये।

चूड़ाजीका हृदय व्याकुलतासे परिपूर्ण है। चौड़ा माथा बल खा गया है। मुख लाल हो गया है। नेत्रोंसे उन्मत्तताकी विशेष प्रभा निकल रही है। चूड़ाजी कुछ देरतक इधर-उधर फिरते रहे; फिर कुछ देर खड़े हो उन्होंने आकाशकी ओर देखा। क्रोधके कारण अधर काँप रहे थे। साँस लम्बी-लम्बी चलती थी। क्रोध और रञ्जके मारे उनका हृदय भस्म हुआ जाता था। कुछ देर तक वे टहलते रहे। उनके मनकी घबराहट न गई। वे कभी शान्त होकर वृक्षोंके नीचे बैठ जाते और कभी एकाएक अकुलाकर टहलने लगते थे। मानो इस समय वे अपने आपेमें नहीं थे। पाठक! यदि यह चिन्ता जल्दी न गई, तो चूड़ाजीकी विचार-शक्ति एकबार ही चलायमान हो जायगी।

स्वभाव भी एक अनुपम चिकित्सा है। जो असह्य दुःख मर्म्मस्थलको चोट देता है, जो अग्नि तुल्य चिन्ता शरीरको जलाये देती है, जिस मानसिक रोगकी ओषधि नहीं, उन सबोंको यह प्रकृति न्यूनकर, दुःखोंको समूल नाश कर देती है। संसारमें कितनेही अभागे पागल होकर सुखी हैं; कितने चाहते हैं कि, हम पागल हो जायँ, परन्तु वे इस ओषधिको प्राप्त नहीं कर सकते। शरीर विवश हो गया। चूड़ाजी एक वृक्षके आश्रयसे बैठ गये। यहाँ कुछ दूरपर ब्राह्मण लोग पुराणोंका पाठ कर रहे थे। अहा! वह सङ्गीत-पूर्ण पुण्य-कथा शान्तिकारिणी रात्रिमें वनके बीच मानों अमृतकी बूँदेसी वर्षा रही थी। यह मन्त्रध्वनि धीरे-धीरे आकाश-मार्गको उड़ी जा रही थी और शास्त्रज्ञ

ब्राह्मणोंके श्रीमुखसे उच्चारित हो, बारम्बार, उस शान्तिमय वनको गुञ्जा रही थी।

वृक्षोंके शाखापत्र मानों उस कौतूहलपूर्ण कथामृतका पान करने लगे। वनवायु उन गीतोंका विस्तार करने लगा। पाठक-गण! एकबार सब कोई मिलकर, इस प्राचीन गौरवकी कथाको गाइए। राजपूत और महाराष्ट्रीय वीरोंकी वीरताको याद कीजिए। मैंने इसी आशयसे, इस तुच्छ उपन्यासका लिखा है। यदि मैं इन कथाओंकी याद दिलानेमें कृतकार्य्य हुआ, तो परिश्रम सफल है। अस्तु।

इस शान्तिमय काननमें, पवित्र पौराणिक कथाका सङ्गीत चूड़ाजीके तप्ते माथेपर शीतल जलकी वर्षाकासा प्रभाव डालने लगा। हृदय शान्त होने लगा। धीरे-धीरे पागलपन भी उन अभागेका पीछा छोड़ भागने लगा। चूड़ाजी इस वृहद् एवं प्रभावशाली कथाको सुन, अपना शोक-दुःख भूल गये। उनको महान् आशाएँ तथा वीरता तुच्छसी जान पड़ने लगी। सहज ही चिन्ता-हरणकारिणी निद्राने उनको अपनी गोदमें ले लिया। चूड़ाजी स्वप्नमें देखने लगे कि, सकल शोक-कारणभूता प्यारी उमामोहिनी आकर अपने कोमल वचनोंसे उनके तप्त हृदय को तृप्त कर रही है। पुनः क्या देखते हैं कि, उनकी प्यारी उमा सिरहाने बैठी हुई, कोमल-शीतल हाथ उनके मस्तकपर धर कर, अपने हृदयकी व्याकुलता दूर कर रही है। प्यारीके प्रेम-भरे नयन, मानों अतृप्त दृष्टिसे प्यारेके मुखको ओर देखते हैं।

शोक और चिन्तासे उमाका प्रफुल्लित मुख सूख गया है। कमल-दलके समान मनोहर नेत्र शोकसे बने हुए हैं। चूड़ाजीने फिर नेत्र बन्द कर लिये और आँसू गिराकर कहा—"हे भगवन्! बहुत सह चुका, अब आशा दो। अब क्यों वृथा हृदयको दुःख दे रहे हो?" इतनेमें कुमारकी अश्रु-बूँदोंको किसी कोमल करने पोंछ दिया। चूड़ाजीने फिर नेत्र खोला। देखा, यह स्वप्न नहीं है, साक्षात् देवी स्वरूपिणी प्यारी उमा सिरहाने बैठी अश्रु-मार्जन कर रही है।

कुमार घबरा गये और उठ बैठे। उमा लज्जित होगई। कुमारने तत्काल अपने कर-पाशोंमें प्रेम-विहङ्गिनीको बाँध कर, चाहा कि सदाके लिये हृदय-पींजरेमें बन्द हो कर लें; पर अभागी लज्जाने आकर मामला ही किरकिरा कर दिया।

कुमार—उमा! तुम कहाँ! हा मेरा अभाग्य! प्यारी! तुम्हारा वह पूर्णेन्दु मुख-सौन्दर्य्य शोक करते-करते, हा! कैसा पीलासा होगया है! इन सब कष्टोंका कारण कौन है? प्यारी! मैं हूँ, अवश्य ही मैं हूँ, मुझे क्षमा"—इतना कहते-कहते कुमारके नेत्रोंमें आँसू भर आये।

उमा—कुमार! यह कैसी बात! आप रोते हैं! आप मेरे आराध्य हैं। अधिक नहीं, कुमार! विलम्ब हुआ! विदा!" इससे कुछ और अधिक न कह कर, उमा कुमारको उसी दशामें छोड़कर मूर्त्तिमती निष्ठुरताका नाईं उठ खड़ी हुई और निकटस्थ एक पालकी पर सवार हो चली गयी।

पाठक ! आप शायद इस अपूर्व सम्मेलनसे घबराते होंगे। अच्छा धैर्य्य धरें। अब मैं कुमारको यहीं छोड़, सिलीन-राजप्रासादकी ओर चलता हूँ।

एक कमरेमें राजा भीमसेनसिंह और मालती इत्यादि बैठे बातें कर रहे हैं। बातोंका सारांश कुमारीके यवनोंके हाथ से छुटकारा पानेका वृत्तान्त था। मालतीने अपने मर्द बननेका हाल छिपाकर कुमारकी बड़ी तारीफ़ की। सुनते ही महाराज बोले, "अहा ! क्या अच्छी बात होती, यदि चूड़ाजीके साथ उमा की शादी हो जाती।"

मालतीने खाँ साहबके क़ैद करनेका हाल भी कहा। सुन-कर महाराज बड़े प्रसन्न हुए और बोले,—"मालती ! तूने मुग़ल बनकर कैसे कुमारीका पता लगाया ?"

मालती—मैं मुग़ल बनी हुई मुहम्मद लोदीकी सेनाकी ओर गयी। जाकर क्या देखा कि, ख़ीमेमें भीषण गड़बड़ मची है। कोई शृंखला नहीं; नियम नहीं। उसीके भीतर बाज़ार लगा है, रंग, तमाशे और रोशनीकी धूम मची है। मैंने वहाँ जाकर कुछ मुग़लोंको बातें करते सुना कि, उमा और श्यामा इसी ख़ीमेमें क़ैद हैं। बस ; मुझे तो इसीसे काम था। किसी तरहसे कुमारको ख़बर दी, जिसे सुनकर वह बेचारे आकर मुग़लोंकी सेनाको छिन्न-भिन्न करने लगे और मैं कुमारीको ले इधर चल दी।

महाराज—यह तुमने अच्छा नहीं किया। ख़ैर, हम

कुमारके अत्यन्त कृतज्ञ हैं। उनके पास मैं एक पत्र लिखकर उन्हें धन्यवाद देना उचित समझता हूँ।

यह कहकर महाराज बाहर गये और मीर मुन्शीको आज्ञा दी कि एक पत्र महाराणाके नाम इस प्रकार लिखा जाये :—

"महाराणाजीके चरण-कमलमें,

"आज बहुत कालोपरान्त मैं आपको पत्र लिखता हूँ। चिरञ्जीव चूड़ाजीने जिस वीरता और बुद्धिमानीसे मुग़लसेनाको नीचा दिखाया है, वह उन्हीं जैसे वीरका काम था। आप लोगोंने हमारी प्रिय पुत्रीको ऐसे संकटमें सहायता दी है कि, उसके लिये यदि मैं आपने चामोंकी जूती भी पहिनाऊँ तोभी उऋण नहीं हो सकता। मैं आप लोगोंको क्या दे सकता हूँ ? तोभी जिसके लिये आपने अपने कुमारके जीवनको भी प्यारा न समझा, इतनी सेनाके वीरगतिको पहुँचने पर भी कुछ परवा न की, और कुमारको ४५ सहस्र सेनाके सम्मुख केवल ५०० सेनाके साथ भेजकर हमारी पुत्रीको उबारा, उसके बदलेमें मैं उसी पुत्री-रत्नको आपके कुमारको देता हूँ और इसी पत्रके साथ नारियल भी भेजता हूँ, आशा है स्वीकार करेंगे।

आपका कृतज्ञ दास,

भीमसेन सिंह।"

महाराजने इस पत्रको पुरोहित को बुलाकर दिया और शीघ्र जानेकी आज्ञा दी। मिश्रजी भी चलते बने।

पाठक! ज़रा अन्तःपुरमें तो चलें, देखें वहाँ क्या होता है?

एक भारी कमरेमें जहाँ सफ़ेद सङ्गमरमरकी ज़ीन और दीवार है, जिसमें विविध प्रकारके लता-पत्र, पशु-पक्षी और मनुष्यों की मूर्त्तियाँ खुदी हैं, खूब मोटा ग़लीचा बिछा है। उसपर दस-बारह स्त्रियाँ नाना प्रकारके वस्त्र पहिने पान खाये बैठी हैं। नाकमें बड़े-बड़े मोतियोंकी नथें पड़ी हैं। किसीके कानमें हीरोंसे जड़ा कर्णफूल, झूमका झूल रहा है। इनमें अधिकांश युवती स्त्रियाँ हैं। हँसी-ठट्ठे की धूम मची है। एकने कहा, "मैं चूड़ाजी बनती हूँ। कुमारीका विवाह मेरे साथ करा दो।" यह सुन एक स्त्री कुमारीके गलेसे लिपट रोनेका स्वाँग करती है। इतनेमें मालतीने कहा, "मैं यवन सेनापति बनती हूँ और कुमारीके साथ विवाह करती हूँ। तुम कुमार बनकर इनको छुड़ा लो।" कुमारी एक हलकी चपत मालतीके गालपर जमाकर बोली, "चल रहने दे। हमने भी क्या मर्दाना बनकर अपने प्यारे की नौकरी की है?"

मालती—जी हाँ, हम ही ने अँगूठी बदलव्वल की है।

उमा—चुप रह, देख यह कौन आ रहा है। सबोंकी दृष्टि उसी ओर फिर गई। देखा कि, एक सुन्दर ब्राह्मण-युवा हाथमें पुस्तक, गलेमें रुद्राक्ष, माथेपर त्रिपुण्ड लगाये चला आता है।

मालती—(बढ़कर) क्यों जी महाराज! आप बिना पूछे युवती स्त्रियोंके बीचमें क्यों चले आते है?

ब्राह्मण—मैं ज्योतिषी हूँ। राज-दर्बारमें इसलिये आया हूँ, कि कुछ इनाम पाँऊ।

मालती—अच्छा, बैठिये ! मैं कुछ प्रश्न करती हूँ, उत्तर दीजिये ।

ज्यो०—अपने मनमें कुछ रखिये, उत्तर देता हूँ ।

मालती—अच्छा, महाराज ! कहिये ।

ज्यो०—(झटसे कुछ गिनकर)—आज भवानीके मन्दिरमें कुमारीके साथ जाओ । मनोकामना सिद्ध होगी ।

मालती—(सबोंको पुकार कर) देखो, बहिन एक ज्योतिषी आये हैं । बड़े विद्वान् दीख पड़ते हैं ।

मालतीकी इस पुकारको सुनकर सब वहाँ पहुँच गईं ।

उमा—अच्छा, महाराज ! मैं प्रश्न करती हूँ, आप उत्तर देवें ।

ज्यो०—(कुछ देर सोचकर) क्या मैं सबके सामने उत्तर दूँ ?

उमा—(मालतीकी ओर बतलाकर) उसके कानमें कह दीजिये ।

ज्यो०—(झुककर) "नारायण सिंह ।"

मालती घबराकर, कुछ ग़ौरसे ज्योतिषीका मुख देखने लगी ।

उमा—क्यों सखी ! घबरा क्यों गई ? क्या उत्तर ठीक है ?

मालती—जी हाँ ।

ज्योतिषीजी वहाँसे विदा हो चले गये और मालतीने महाराजसे जाकर कहा,—"हमने मनौती मानी थी कि, जब कुमारी आवेगी तो उसके साथ देव-मन्दिरकी यात्रा करेंगी ।"

महाराजने "अच्छा" कहकर, एक चावदारको बुलाकर, सब ठीकठाक कर दिया। कुछ देर बाद एक रथ कुमारीके द्वारपर जा खड़ा किया गया और मालती कुमारीके साथ रथ पर सवार हो, पहरेके पूरे बन्दोबस्तके साथ मन्दिरकी ओर चली। ठीक समय-पर पहुँच, वहाँ कुमारसे भेंट की। इधर मालती घूमती हुई कुछ दूर निकल गयी, तो क्या देखती है कि, नारायणसिंह चले आते हैं। दोनोंमें खूब प्रेमकी बातें हुईं, इसके बाद जो हुआ, सो पाठकोंको मालूम ही है।

आप यहाँ इस बातकी शङ्का कर सकते हैं कि, नारायणसिंह कैसे जान गये कि कुमार इधर ही हैं। पाठक, जान लें कि, नारायणसिंह बराबर कुमारके साथ ज्योतिषीके भेषमें थे और जब कुमारको मन्दिरके निकट इस दशामें देखा, तो तुरत उसी भेषमें उमामोहिनीको ख़बर देनेके लिये चले गये और उमा भी आ पहुँची। इधर इनको भी मनोकामना सिद्ध हुई।

चूड़ाजी घोड़े पर सवार हो अपनी सेनाकी ओर चले कि, इतने ही में पीछेसे आवाज़ आई, "कुमार !" कुमारने पीछे फिर कर देखा तो अपने सुहृद् नारायणसिंहको आते देख ठहर गये। निकट आ जानेपर नारायणसिंहने कुमारको प्रणाम किया। चूड़ाजीने जवाब देकर कहा, "तुम इधर कैसे आये ?"

नारायणसिंह—मैं आपसे अलग कब था ? आपके पीछे पीछे परछाईं की भाँति चलता हूँ।

कुमार—तो क्या तुम कह सकते हो कि, वह ज्योतिषी किधर गया, जो मुझसे जङ्गलमें मिला था ? उसीके वचनों पर मैंने दूसरी ओर जा, अपना मनोरथ सिद्ध हुआ पाया।

नारायण—वह ज्योतिषी, जिसने आपको उधर फेरा और उमामोहिनीको ठीक समय पर उस मन्दिरमें पहुँचाया, आप का यह दास ही था।

कुमार—(चौंककर) ऐं ! क्या तुम ही थे भाई ! तब तो तुमने इनाम पानेका काम किया है।—यह कहकर उन्होंने अपने हाथकी एक हीरेकी अँगूठी उतार कर नारायणसिंहको दी।

नारायणसिंहने आद्योपान्त सब वृत्तान्त कुमारको कह सुनाया, जिसे सुनकर कुमार अति प्रसन्न हुए और दोनों सेनाकी ओर चले। थोड़ी देरमें खीमेमें जा पहुँचे। उसी समय एक मनुष्य घोड़ा दौड़ाता हुआ वहीं आया। उसने कुमारको एक पत्री दी। यह पत्री चित्तौड़के राणाजीकी भेजी हुई थी और इसमें केवल यही लिखा था कि, नागर चालके साङ्खला वंशवाले राजपूत मेवाड़ लेना चाहते हैं। तुम तुरन्त सेनाके साथ चले आओ।

जिस समय सोसोदियोंको यह समाचार ज्ञात हुआ, वे एकबारगी तैयार हो कुमारसे शीघ्र प्रस्थान करनेकी मिनती करने लगे। चूड़ाजीने भी नारायणसिंहके साथ अपनेको लैस होकर चलनेकी आज्ञा दी। साथ ही सेना चल खड़ी हुई। यह सैन्य आमेरके निकट पहुँची कि, इतने ही में राणा जी भी ससैन्य आ पहुँचे। महाराणा लाखाजी बड़े दूरदर्शी थे। उन्होंने विचारा कि, दोबार विजय पाये हुए वीरों द्वारा, उत्साह-समयमें ही, शीघ्रतासे इन लोगोंको परास्त करना उचित है। क्योंकि शत्रु अपने देशपर चढ़ाई करने आवें और अपने देशमें आकर लड़ाई करें, सो ठीक नहीं है। यह तो निश्चय है कि, हमलोग ही जीतेंगे ; परन्तु देशमें आक्रमण रोकनेसे हमारे देशकी विशेष क्षति होगी। जबतक लड़ाई रहेगी, लोग भयभीत रहेंगे। बाणिज्य-व्यापार बन्द रहेगा और खेती-गृहस्थीका काम न हो सकेगा। इसलिये पाई हुई विजय भी हमको

महँगी पड़ेगी। इस कारण यही उत्तम है कि, शत्रुके चढ़ आनेसे पहले ही, अपने देशको सीमाके बाहर ही उनके साथ युद्ध किया जावे। यह विचार सब सरदारोंको भी अच्छा लगा और सब चल खड़े हुए।

राणाजी देशसे बाहर निकल आमेर पहुँचे। जहाँ कुमारकी सेना भी आ मिली। इस समय एक विशेष घटनाने और भी राजपूतोंमें जोश पैदा कर दिया। उस दिन सन्ध्या समय राणा और चूड़ा जी टहलते हुए, पूर्व्वकी दो लड़ाइयोंमें घायल सिपाहियोंकी ओर चले गये। उनकी दशा देख राणाने उन्हें चित्तौड़ पहुँचा देनेकी आज्ञा दी। आज्ञा सुन घायल सैनिक अति अप्रसन्न हुए और राणासे युद्धमें अपने साथ ही रखनेके लिये विनती करने लगे। वे बोले, "महाराणाजी! हम सबोंको यहीं रहने दीजिये। लड़ाई आरम्भ होनेतक हमलोग आराम हो जायँगे और कदाचित् लड़ाईमें मारे भी जावेंगे तो स्वर्ग पावेंगे। हमको लड़ाईमें रहनेकी अत्यन्त इच्छा है। आप हमको चित्तौड़ भेजकर निराश न करें। हमलोग अपने देश और अपनी प्रतिष्ठाके लिये अपने शरीरकी आहुति करनेको भी उद्यत हैं। महाराज! हमलोगोंको चित्तौड़ अपने साथ ले चलें। यदि हमसे लड़ा न जायगा, तो देखेंगे तो सही कि, हमारे शूरवीर बान्धव अपनी भूमाताके लिये कैसे युद्ध करते हैं। जो महाराज हमलोगोंको चित्तौड़ भेजेंगे, तो निराश रहनेके कारण हमारे घाव अच्छे न होंगे और बढ़े

क्लेशसे प्राण छूट जवेंगे ; इसलिये हमें अपने साथ रहनेकी आज्ञा दीजिये। हम मार्ग और लड़ाईके कष्ट सहनेका भार अपने मत्थे लेते हैं।" इस प्रकार युद्ध-प्रेमी घायलोंका निवेदन सुन, राणाजीने अत्यन्त अशक्त योद्धाओंको चित्तौड़ भेज शेष वीरोंको अपने साथ ले लिया। राजपूत लोग इस समाचारको सुन अत्यन्त प्रसन्न हुए और जयध्वनि कर उन्होंने खूब युद्धोत्साह प्रकट किया। फिर जब सब शान्त हुए, तब राणाजीने सबको निम्नलिखित प्रकारसे आज्ञा दी।

"शूर सामन्त और सरदारगण! लड़ाईमें क्या बर्त्ताव करना चाहिये, किस प्रकार पराक्रम दिखाना चाहिये, यह आप लोगोंको बतलानेकी आवश्यकता नहीं है। आप लोग तथा आपके पूर्वज सदासे यही काम करते चले आते हैं। साङ्खला वंशवाले राजपूत हमारे देशके शत्रु हैं। उनको पराजित करना और उनकी उमङ्ग तोड़ना ही हमलोगोंका मुख्य कर्त्तव्य है। शूरवीर योद्धाओ! जिस उमङ्गसे आपलोग मेरी सहायता तथा अपने देश और धर्म्मकी रक्षा करनेके लिये आये हैं, उसी उमङ्गसे अन्त तक कर्त्तव्य-पालन कीजिये, आप लोग जानते हैं, कि राजगढ़ और माँडलगढ़की संयुक्त सेना हमारे देश पर चढ़ाई कर चुकी है और अलपकालही में वह हमारे देशमें घुस आवेगी। इसलिये पहले ही शत्रु के देशमें पहुँचकर युद्ध करना चाहिये। यह निश्चय है कि, इस युद्धमें हमारी जय होगी ; क्योंकि धर्म्म हमारा और अधर्म्म

उनका है। इस युद्धके मूलकारण हम नहीं, किन्तु वे ही हैं; अतः ईश्वर उन्हें पापका फल अवश्य देंगे। क्षत्रिय-धर्म्म क्या है, यह आप ख़ूब जानते हैं। शत्रुको पीठ दिखाना तो असम्भव है। जीतकर लौटना या संग्रामभूमिमें देह त्यागकर स्वर्ग पाना, हमारा मुख्य कर्त्तव्य है। क्षत्रियोंको लड़ाईमें मरनेसे स्वर्ग और जीतनेसे सुयश लाभ होता है। इससे अच्छा अवसर जन्म सफल करनेका नहीं मिलेगा। अतएव शत्रु-नाशके लिये तत्पर रहो।" राणाजी वक्तृता समाप्त कर ख़ीमेमें गये और समूची सेना, जो मय सवार और पैदलके १ लाख थी हर्वे-हथियारोंसे तैयार हो गयी।

चूड़ा—क्यों पिताजी! यह राजपूतगण क्यों लड़ाई किया चाहते हैं? क्या इन्हीं लोगोंने आपको पत्र लिखा है?

राणा—हाँ, ये लोग मेवाड़के दक्षिण भागमें क़िला बना रहे थे, जिसपर हमारी ओरसे छेड़े गये। तब उनके राजा शक्तिसिंहने एक पत्र लिखा है, जिसका सारांश यह है:—

"आपने हमारे क़िलेको लेकर हमारे देशमें अशान्ति की अग्नि भड़का दी है। इसलिये आप चाहें तो निम्नलिखित शर्त्तोंको मान सुख पूर्व्वक रहें; नहीं तो लड़ाईमें इसका फ़ैसला करें। शर्त्तें ये हैं;—(१) आप हमारे क़िलेके बनानेमें रोक-टोक न करें। (२) हमें मेवारके निकटवाला बदनौर ग्राम दे देवें। (३) हमें तीन करोड़ सालाना कर देवें, जिसके साथ एक हाथी हौदेके साथ, एक तलवार और

एक घोड़ा भी रहे। इन शर्त्तों को सुन समस्त सेनापतियोंमें खलबली मच गयी। सबने एक स्वरसे कहा—"मेवाड़ दूसरे राज्यको कर देवे! ऐसा कभी नहीं हो सकता! प्राण जाने पर यह सम्भव है।

महाराणाके मुखारबिन्दसे कूँचकी आज्ञा सुन, सब सेना गर्ज उठी। जय जय कर सब सेनापति विधि-पूर्व्वक अपनी-अपनी सेना चलाने लगे। सवार तथा पैदल सहित एक लाखसे अधिक सेना थी। चौदह सौ हाथियोंकी पंक्ति लगी थी। कूँच देखकर यही जान पड़ता था कि, एक बड़ा सागर उमड़ा हुआ चला आता है। सेनाके वीरोंकी उमङ्ग और उत्साहसे यही झलक रहा था कि, ये लोग राजगढ़को समूल नाश करनेको जाते हैं। पैदल, सवार और हाथियोंके पैरों से उठी धूलने सूर्य्यको भी छिपा दिया। ऐसा अन्धकार छा गया जैसे वर्षा ऋतुमें मेघमालाकी ओटमें सूर्य्यके आ जानेसे होता है। धरती ऐसी दहल रही थी कि, जैसी भूकम्पके समय मालूम होती है। चलती हुई सेना मार्गमें कहीं सिन्धुराग, कहीं भुजंग प्रयात गाती जाती थी। बहुतेरे क्षत्रिय वीर अपने-अपने पराक्रमको वर्णन करते जाते थे। उन राजपूतों पर क्रोध करनेके कारण उनकी आँखें सिन्दूरिया हो रही थीं। उनके हृदयमें घर-बार और कुटुम्बका मोह लेशमात्र भी न था। उधरकी सेना तो चूड़ाजी और कृष्णसिंहके अधिकारमें आगे बढ़कर क़वायद करने लगी और इधरकी सेना

माधवसिंहके अधिकारमें डेरा-डण्डा उठा सीधी राजगढ़की ओर चली। ढोल, भेरी, शहनाई विविध प्रकारके बाजे बजने लगे। चारण और बन्दीजन शूरता-भरी कवितासे वीर राजपूतों को उत्तेजित करने लगे। वे महाभारत इत्यादि काव्योंमेंसे, वीर रस भरे काव्योंको उद्धृत कर वीरोंके हृदय उमड़ानेवाली कविता सुना रहे थे। सेनामें अधिक घोड़ेसवार थे ; पैदल बहुत कम थे। मार्गमें जाते समय, उनके हाथ हथियारोंके सँभालनेमें, आँखे (चञ्चल, क्रोध-पूर्ण, सिन्दूरिया) शत्रुओं की खोजमें और कान "शत्रुकी सेना आ रही है" इस शब्दके सुननेके लिये अधीर हो रहे थे और उनके पग इन शब्दों के कानमें पड़ते ही घोड़ोंको एड़ लगानेको तैयार थे। ये युद्धकी उमङ्गमें उमगे हुए सेनापतिकी आज्ञा पा तदनुसार करनेको तैयार थे। दूसरे दिन राणाजी अपने देशकी सीमा पर आ पहुँचे। यह स्थल स्वभाविक ऐसा था कि, मानों राजगढ़ और मेवाड़को ईश्वरने ही पृथक किया हो। राज-गढ़की सीमा में घुसते ही एक बहुत बड़ा मैदान सामने आया। यह मैदान मेवाड़के उच्च प्रदेशसे ढालू होते-होते राजगढ़में जाकर समतल हो गया है। उसके आगे एक बड़ा भारी जङ्गल था। मेवाड़ देशमें आनेका मार्ग एक घाटी में होकर था। राणा-जीने युद्धके लिये यही स्थान उत्तम समझा। कुछ सेना घाटीमें तथा कुछ पहाड़ोंके गुप्त भागों में पीछे रख दी और कुछ दोनों ओर की झाड़ियोंमें छिपा दी। झाड़ी की सेनाको आज्ञा दी

कि, ज्योंही राअपूतों को सेना घाटी तक हमारी सेनाके निकट आवे ; त्योहीं तुमलाग दोनों ओरसे, अमुक संकेत करने पर, धावा कर देना और गुफ़ावाली सेना से यह कहा गया कि, ज्योंहीं राजपूतों की सेना पीठ फेरे, तुम लोग उसके पीछे पड़कर उसका विनाश करना।

माधवसिंह यह समाचार लेने को भेजे गये कि, साँखला-वालों की सेना कहाँ और कितनी है और राणाजीने आप सेनाका मुख्य भाग ले मैदानमें पड़ाव डाला। माधवसिंह आगे बढ़े। थोड़ी दूर जा, आकाशमें धूल उड़ती देख, उन्होंने अनुमान किया कि शत्रु-सेना आरही है। उनके पास एक सहस्र सेना थी। शत्रु-सेनाको आते देख, सबोंको पासकी झाड़ी में छिपने की आज्ञा दी। उनके मन में ऐसा हौंसला था कि; इस विजय की कीर्त्ति मुझे ही मिले; परन्तु यह पूरी होने योग्य न थी। वह शूर और बुद्धिमान तो थे, परन्तु सैन्यरूपी महासागर में उनकी सेना बिन्दुमात्र थी। राजगढ़ और मांडलगढ़ का समस्त सैन्य-दल मेवाड़ विजय करने के लिये इकट्ठा होकर आ रहा था। दोनों सेनाओं के सरदार शूर और पराक्रमी थे। उनकी सेना ऐसे ढंग से चली आती थी, मानो कोई कोट उठा चला आ रहा हो। ऐसे अपार दल को माधवसिंह थोड़ी सेनासे भेद सकें, यह असम्भव था। ऐसे दल पर सहसा टूट पड़ना, पतंग का दीपक पर टूट पड़नेके समान था। बुद्धिमान माधवसिंह एक ऊँची टेकरी पर चढ़,

शत्रुदल अपार देख, शीघ्र नीचे उतरे और अपनी सेना सहित पीछे मुड़ पड़े। घोड़ा दौड़ाते हुए तत्काल राणाजी के पास पहुँचे और समाचार दिया कि, शत्रु-दल असंख्य है और अति वेगसे आ रहा है। अब आप भी सामना करने को तैयार हो जाइये। राणाजीने यह बात सुन चूड़ाजी को बुला सब हाल कहा और भेरी का नाद कराया। सैन्य सब तैयार हो गई। जिस समय दोनों सेनायें आगे बढ़ रही थीं, उसी समय एक ब्राह्मण आकर राणाजी के सम्मुख खड़ा हो गया और एक पत्नी इनके हाथमें दी। पत्नी पढ़ी जाने पर मालूम हुआ, साँखल-वंशवाले शक्ति सिंह इसके प्रेरक हैं। उसमें लिखा था कि, आज और कल लड़ाई बन्द रहे तो अच्छी बात है। क्योंकि वे अभी पूरे तौरसे तैयार नहीं है और यदि आप अधीन होना चाहते हैं तो लिखें, हम लोगोंको कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं।

राणा—महाराज! आप जाकर कह देवें कि, हमलोग क्षत्री हैं, धर्म्म-युद्ध करते हैं। लड़ाई दो रोज़ बन्द रहेगी। और जो अधीन होनेके बारेमें लिखा है, इसका उत्तर हम पीछे देंगे।

ब्राह्मण—आशीर्वाद देकर चला गया।

महाराणाने अपने सेनापतियों को आज्ञा दी कि, दो रोज़ युद्ध बन्द रहे। यह सुनते ही सेनाने अपनी कमर खोल दी। पूर्वोक्त घटना के सन्ध्या-समय राणाजी, कुमार और

सेनापतिगणोंके साथ एक बड़े खेमेमें बैठे हैं। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ है। राणाजीने कुछ कालोपरान्त सेनापतियोंसे वीरतायुक्त वाक्य सुनने के नमित्त कहा—"क्यों सेनापतिगण! आप लोगों की सम्मति यह है कि, हम शत्रु-ओंके अधीन होजायँ ?"

सेनापतिगण—नहीं नींह, कदापि नहीं, प्राण रहते कदापि नहीं।

राणा—हाय! क्या वह दिन फिर आवेगा कि, भारतवर्ष स्वाधीन होगा! युधिष्ठिर और रामचन्द्रकी नाईं हिन्दू ससागरा पृथ्वीके अधिपति होकर, हिमालयसे लेकर सागर कूल तक, सम्पूर्ण देशका शासन करेंगे ? इस बचन को सुनकर सब सभासदोंका हृदय विदीर्ण हो गया। सब चुप रह गये। उस सभाके कोनेसे एक गम्भोर आवाज़ सुनाई दी—"राजन्! इन बलवान भुजाओंसे खड्ग पकड़िये और परिश्रम द्वारा उन्नति-मार्गमें पैठिये; अवश्य ही वह दिन आवेगा।" राणाजोने चकित होकर देखा कि, जटाजूट-धारी अङ्गपर विभूति मले एक योगिराज खड़े हैं—यह राजगुरु थे।

राणाजीके नेत्र उत्साहसे पूर्ण हो चमकने लगे और बोले योगिराज! आपने तो एकाएक आकर बाल्यकालके उत्साहसे हृदयको फिर उत्साहित कर दिया। हमें बालकपनको बातें फिर याद आती हैं। तात क्षेत्रसिंहने मरणकालमें हमें बुलाकर कहा था कि वत्स! तुम जो चेष्टा करते हो, उससे

बड़ी चेष्टा कोई नहीं। इस उन्नतमार्गका अनुसरण कर, देशकी स्वाधीनता साधन करो और गौ, ब्राह्मण तथा कृषकों की रक्षाकर, देवालय-कलुषितकारियोंको दण्ड दो।

योगिराज—यदि आप इस समय उन लोगोंके अधीन हो जायँगे; तो यह आप लोगोंका कायरपन होगा। ("कायरपन" शब्द सुनते ही सभामें कोलाहल मचगया। वीरोंके खड्ग म्यानमें झनझनाने लगे।) राजन्! यह जो चारों ओर बालदिवाकर की नाईं हिन्दू राजाका तेज अन्धकारको भेदन करता हुआ उदय हो रहा है, वह सूर्य्य रूपी तेज क्या अकाल होमें अस्त हो जायगा? लक्ष्मी अर्पित वर्ण-गौरव क्या आप त्याग देंगे? बस, मैं इतना ही कहता हूँ; आप स्वयं विवेकी हैं, विचार लीजिये। यह कह, योगीराज वनकी ओर पधारे और सभा विसर्ज्जन हुई।

अब हम पाठकोंको फिर वहाँ ले चलते हैं, जहाँ महाराज भीमसेन सिंह अपने पुरोहित को पत्र और नारियल प्रभात दे चित्तौड़ को विदा करते हैं।

राजा—पुरोहितजी! आप चित्तौड़ जा, यह नारियल चूड़ाजीसे स्वीकृत कराइये।

पुरो०—अच्छा महाराज! मैं अभी जाता हूँ।

महाराज भीमसिंहने तीन चार अशर्फ़ियाँ राह-खर्चके लिये दिलवा दीं, साथही एक हीरेका कण्ठा और एक तलवार देकर कहा,—"जब नारियल स्वीकार हो जाय, तब यह कण्ठा कुमारके कण्ठमें पहना हाथमें तलवार दे दीजियेगा।" पुरोहित जी वहाँसे अपने घर आये और कपड़ा-लत्ता, छाता, छड़ी प्रभृति नितान्त आवश्यकीय वस्तुएँ ले, ब्राह्मणोसे विदा हो चित्तौड़ को चल दिये। मार्ग अति दुर्गम है। विशेष कर पहाड़ी मार्ग अति दुर्गम होताही है और प्राय बहुत स्थान आश्रय-शून्य होते हैं। बेचारे एकाकी ब्राह्मण एक दिन एक देवालयमें आतिथ्य स्वीकारकर, दूसरे दिन चित्तौड़ पहुँचे। वहाँ जानेपर मालूम हुआ कि, महाराणाजी लड़ाईमें गये हैं; इसलिये वह वहीं ठहर गये।

अब लड़ाईका हाल सुनिये—दोनों दलोंकी सेना मैदानमें आ डटी। राणाजीने चूड़ाजीको व्यूह रचना करनेकी आज्ञा दी। चूड़ाजी व्यूह-रचनामें समरसोके समान कुशल थे। उन्होंने निम्नलिखित व्यवस्थानुसार रचना की। आप और राणाजी सेनाका मुख्य भाग ले मध्यमें रहे। दाहिनी ओर माधवसिंह और नारायणसिंह एवं वायीं तरफ़ कृष्णसिंह सेना सहित रक्खे गये थे। हाथियोंकी बाढ़ इसलिये लगाई थी कि, शत्रु-दल एक साथ टूटने न पावे और जो राजपूत एकाएक टूटना चाहें, उनके लिये मार्ग रक्खा और सब सेना घाटीके इतने निकट रक्खी गई कि, जब शत्रु लोग ठीक पास तक चले आवें तो झाड़ीवाली सेना एकदम दोनों ओरसे उनकी पीठ पर टूट पड़े। इस प्रकार सेनाका विभाग हो रहा था कि, शत्रु-सेना आ पहुँची। शत्रु भी असावधान नहीं थे। उस समय केवल चार घड़ी दिन रह गया था। राजपूतोंको देखतेही वे लोग उनके ऊपर टूटनेके लिये कटिवद्ध हुए। राजपूत लोग भी इधर उनसे अधिक अधीर हुए। राणाजीके दलकी व्यूह-रचना देख शक्तिसिंहने भी, जो व्यूह-रचनामें चूड़ाजीसे कम न था, अपनी सेनाको जमा दिया। उस असंख्य शत्रु-सेनाके सन्मुख राजपूतोंकी संख्या बहुत कम थी; तिसपर भी राजपूत लोग अपने शत्रुओंको काटनेके लिये आतुरतासे राणाजीकी आज्ञाकी राह देखने लगे।

चूड़ाजीने विचारा कि शत्रु-सेना अधिक है; शत्रुओंसे हम हाथीपर अच्छी तरह लड़ न सकेंगे और हाथीपर चढ़कर सेना की ठीक व्यवस्था भी न कर सकेंगे। शत्रु-सेनाको हमें जातीय पराक्रम दिखलानेकी आवश्यकता है। उसे हम हाथीकी अपेक्षा घोड़ेपरसे भली भाँति दिखा सकते हैं। ऐसा विचार कर राणाजी पहिले घोड़ेपर चढ़े और एकाएक अपनी सेनाको धावा मार हरवाल तोड़ देनेकी आज्ञा दी; जिससे लोग घबराहट में पड़ जावें। शत्रुसेना के हाथी पीछे रक्खे गये थे, ताकि सेना पीछे हट न सके; परन्तु चूड़ाजी ने विचार किया कि यदि उनके अग्रसर योद्धा पीछे हट गये, तो सारी सेनामें हलचल पड़ जावेगी। इतने ही में झाड़ीवाली सेना निकल कर उन्हें काट डालेगी। सबसे प्रथम राणाजी आगे बढ़े; उनके पीछे चूड़ाजी इत्यादि बड़ी वीरतासे चले। वीर सीसौदियोंको नंगी तलवार लिये हुए, एकलिङ्गजीकी जय-कार बोलते हुए आते देखकर, शत्रु लोग भी हर-हर महा-देवकी जय पुकार करते हुए आगे बढ़े। सीसौदिये लोग 'मारना या मरना' ऐसा दृढ़ संकल्प करके अति वेगसे आगे बढ़े कि, शत्रु-सेनाका हरावल टूट गया; परन्तु साहसी राजपूत गण ऐसी दृढ़तासे लड़ते रहे, कि हरावल टूट जानेपर भी नहीं घबराये और हरावलके मुर्दोंके ऊपर होकर आगे को बढ़े चले आये। राजगढ़का राजा माँडलगढ़के राजाको

सेनाके बीचमें था और उसकी बाईं ओर लोदी-सरदार शरीफ़ ख़ाँ था, जो अवसर पाकर जा मिला था। दोनों राजा अपनी-अपनी सेनाको जोश दिला-दिलाकर बढ़ा रहे थे। उनके पराक्रमका ही यह फल था कि, एक अचलगढ़की भाँति राज-पूत-दल खड़ा लड़ रहा था। जो लोग कट जाते, उनकी जगहपर बिजलीकी चमककी भाँति दूसरे कब आ खड़े होते थे, जान भी न पड़ता था। पहला धावा सीसौदियोंका निष्फल हुआ; किन्तु ये शूरवीर सफलता प्राप्त किये बिना कब लौटनेवाले थे? इनको हताश होनेके बदले और अधिक जोश आया। चूड़ाजी के रोम भालेकी भाँति खड़े होगये। उन्होंने राजपूत शूरवीरोंसे कहा कि मेरे साथ चलो, मैं आगे चलता हूँ। उन नीचोंको क्या सामर्थ्य कि, एकलिङ्गजीके सहाय होनेपर भी वशमें न आवें। चलो, उन्हें मार हटावें। ऐसा कहते हुए, अपने विजय नाम घोड़ेके ऐसी ऐड़ मारी कि, वह शक्तिसिंहके अत्यन्त निकट पहुँच गया। उन्होंने भालेके एक ही प्रहारमें हाथीवानका प्राण ले लिया। शक्तिसिंहने भी प्रहार किया, परन्तु चूड़ाजीने ढालपर रोक लिया। सेनापतिगणने कुमारको जोखिममें देख, राणाजीसे आगे बढ़नेको कहा; किन्तु उन्होंने कहा कि नहीं, बढ़नेकी आवश्यकता नहीं है। देखो, कुमार किस भाँति अपनेको बचाते हैं। ऐसा वचन सुन, सबके सब हाँ! हाँ! करते रहनेपर भी वहाँ पहुँचगये और बिज-लीके समान चमकती हुई तलवारों और भालोंके प्रहारसे

सहस्रों शत्रुओंको धूल फँकाते भूमिशायी करने लगे। सैकड़ोंके धड़ और सिर अलग अलग जा पड़े। चारों तरफ़ शत्रुओंके मुर्दों के ढेर लग गये। हाथीवानके मारे जानेसे शक्तिसिंह घोड़ेपर सवार हुआ और आगे बढ़ सेनाको उत्साहित करने लगा। माँडलगढ़का राजा भी अपने मित्रकी सहायता को दौड़ा आया। शत्रुओंने चूड़ाजीके मारनेका बड़ा उपाय किया; किन्तु वे शत्रुओंका प्रहार बचाते और अपना करते हुए आगे ही बढ़े जाते थे। लड़ाईने अति भयङ्कर रूप धारण कर लिया था। चारों तरफ़ लाशें और रक्तकी धारा ही दिखाई देती थी। चूड़ाजी चौमासेकी हरी घासकी भाँति शत्रुओंको काटते थे; परन्तु अब सरदारोंके साथ चारों ओरसे शत्रुकी सेनासे घिर गये। अब उनके बचा-वका कोई उपाय न था। चारों तरफ़ हाहाकार की ध्वनि सुनाई देने लगी। परन्तु इसी समय नई सेना आगई और शत्रुओंको इकट्ठा होकर लड़ना महा कठिन होगया। सब जिधर-तिधर प्राण ले भागने लगे। लोदी-सेनापति शरीफ ख़ाँने दृढ़तासे सेनाको इकट्ठा कर फिरसे लड़ानेका प्रयत्न किया, किन्तु सब निष्फल हुआ। शक्तिसिंह निराश होगया। जयकी आशा जाती रही। शक्तिसिंह पकड़ा गया और उसकी बची-बचाई सेना औरभी निराश हो भागी। पहाड़ोंमें छिपी हुई राजपूत-सैन्य निकल आई और भागते हुए शत्रुओंको पकड़ लिया और जिन्होंने सामना किया उन्हें

मार गिराया। इस प्रकार राणाके पराजय-इच्छुक शत्रुओंका एक ही पहरमें सत्यानाश हो गया।

इस प्रकार असंख्य शत्रुओं पर विजय पा सीसौदिये लोग पीछे फिरे। उनकी भी बहुत हानि हुई। बहुतसे शूरवीर वीर-गतिको प्राप्त हुए। इस प्रकार विजयशाली हो, राणाजीने ससैन्य चित्तौडमें बड़ी धूमधामसे प्रवेश किया। नगर-निवासी अति हर्षित हो गान कर पुष्प-वृष्टि करने लगे। सबोंने गुणगान कर सेनाका उत्साह बढ़ाया। इस प्रकार अभ्यर्चना पाकर, राणाजीने चूड़ाजीके साथ राज-महलमें प्रवेश किया। कुमारने रनवासमें जा, सादर माताजीके चरणोंमें मस्तक नवाया। माताने आशीर्वाद दे, प्रेमपूर्व्वक पुत्रको चूमा। इधर महाराणाजीने दरबारमें जा आज्ञा दी कि, कल दरबार-आम होगा।

पाठकगण! चलिये, हमलोग भी चलकर इस समय आराम करें। कल देखा जायगा, आजका दिन तो बीत गया। प्रातः-काल होगया। बाल दिवाकरकी सुन्दर किरणें मनको लुभाने लगीं। कुमार नित्यकर्म्म कर निश्चिन्त हुए और नारायण सिंहको साथ ले टहलनेको निकले। टहलते-टहलते बहुत दूर निकल गये और थकजानेके कारण एक सरोवरके निकट एक चबूतरेपर बैठ गये। सरोवर विचित्र था। ये लोग उसकी शोभा देखनेमें मुग्ध हो गये। उस सरोवरमें सीढ़ियाँ स्वच्छ स्फटिककी बनी हुई थीं। भँवरगण सरोजिनोके मधुर सौरभसे

मोहित हो गानकर रहे थे। समीपवर्त्ती कदम्ब वृक्षकी नई-नई पत्तियाँ सूर्य्यकी छाया रोककर जल पर रंग-बिरंग की शोभा प्रदर्शित कर रही थीं। इतनेमें कुमारने कहा,—"भाई। हम लोग यहाँ बैठे हैं और आज दरबार-आम होनेवाला है।"

नारायण—(चौंक कर) अच्छा, तो हम लोगोंको चलना चाहिये। कुमार! एक आनन्द-समाचार सुनाऊँ? कुछ इनाम मिलेगा?

चूड़ाजी—कहो मित्र! तुम्हारे लिये इनाम कैसा?

नारायण—सिलीन राज्यसे एक ब्राह्मण श्रीफल लेकर आया है।

चूड़ाजी—एक ही क्यों, मालतीका नहीं?

नारायण—नहीं मित्र, देखें क्या होता है? हम तो मालतीके दास हो चुके हैं। दूसरी मूर्त्ति अब हमारे हृदयमें बैठ नहीं सकती।

चूड़ाजी—अच्छा, तुम इनाम लोगे। हमें भी कुछ दो, तो कहूँ।

नारायण—कहिये।

चूड़ाजी—तुम्हारी मालतीने भी तुम्हारे लिये अलग एक श्रीफल भेजा है। उसे भी ब्राह्मण-देवता लाये हैं।

नारायण—(उछलकर) क्या सच है?

चूड़ाजी—और क्या? चलो; दरबारमें तो ब्राह्मण-देवता आवेंहीगे। इस प्रकार बातचीतकर दोनों हाथ पकड़ वन-

शोभा देखते हुए चले। कुमारके विवाहका पैग़ाम ले ब्राह्मण-देवताके आनेके कारण, चित्तौड़की शोभा विचित्र ही बनाई गई है। सजावटके कारण चित्तौड़ ऐसा वेष धारण किये हुए है, जैसा कि उत्सवके दिनोंमें कुल-ललनायें अपूर्व्व वेष धारण करती हैं। चूड़ाजी नारायण सिंहको साथ लिये नगर देखते हुए राज-भवनको चले जा रहे थे। मार्गमें असंख्य अश्वा-रोही और प्यादे आते जाते थे। दूकानोंपर विचित्र विचित्र चीज़ें बिक रही थीं। कहीं मकानोंपर निशान फहरा रहे थे। कहीं गृहस्थ लोग अच्छे-अच्छे वस्त्र पहने अपने-अपने बरामदोंमें बैठे थे। कुल-कामिनियाँ राजपूत वीरोंको देख अपना तन-मन वारती थीं। मार्गमें अनेक छकड़े, पालकी, हाथी, घोड़े, अमीर-उमरा घोड़ोंकी बाग उठाये बिजलीकी तरह गमन करते थे। बड़े-बड़े हाथी सुन्दर-सुन्दर गहने पहने, लाल वस्त्रकी झूलें धारण किये, सूँड़ झुमाते, मतवाली चालसे जा रहे थे। राज-भवनके सन्मुख एक लाल पत्थरका बना हुआ एकलिङ्गजी का मन्दिर शोभायमान हो रहा था। अगणित मनुष्योंके समूह मन्दिरमें पूजार्थ आते-जाते थे। ऐसा स्थान उस समय समस्त भारतवर्षमें क्या, सम्पूर्ण जगत्‌में नहीं था। इसमें सन्देह नहीं, दुर्गके भीतर हज़ारों झण्डे फहरा-फहरा कर राणाजीकी शक्ति और गौरवको प्रकाश कर रहे थे। सेना सन्मुख हो, क़तार बाँधे खड़ी थी। सैनिकोंकी नङ्गी तलवारें बिजलीके समान चमक रही थीं। सहस्रों मनुष्य अनेक प्रकार की वस्तुएँ बेच रहे

थे। अश्वारोही, गजारोही, शिविकारोही चित्तौड़के प्रधान-प्रधान कर्म्मचारी और अनेक मनुष्य राज-भवनमें जा रहे थे। वस्त्र और आभूषणोंकी शोभा देख नेत्रोंमें चकाचौंध लगती थी। बीच-बीच में तोपोंका शब्द भी सुनाई दे जाता था। इस प्रकारकी शोभा देखते हुए दोनों मित्रोंने प्रासादमें प्रवेश किया। वहाँ सब सामान ठीक था।

———

राणाजी एक बड़े भारी दालानमें, जिसमें कम-से-कम दो-तीन लाख मनुष्य अँट सकते हैं, एक ऊँचे सिंहासन पर बैठे हैं और अमीर-उमरा दर्जे-बदर्जे बैठे हैं, मनुष्योंके मारे दर्बार आज ठसाठस भरा है। राजकुमार चूड़ाजी भी बड़े ठाट-बाटसे राणाजीकी बग़लमें जा बैठे हैं। सिरपर फ़ौलादी टोपी है; बदनमें बेश-क़ीमती कपड़े हैं, गलेमें बड़े-बड़े पन्नोंके दानोंका कण्ठा पड़ा हुआ है, भुजबन्द भी पन्नों ही का है, जिसकी चमक चेहरे पर पड़कर ख़ूबसूरती

को दूनी कर रही है; कमरमें बहुमूल्य हीरोंकी जड़ाऊ पेटी चमक रही है। उनके चेहरेसे जवाँमर्दी, दिलेरी और बहादुरी टपक रही है। राणाजी स्वभावतः उठ खड़े हुए और बोले, "आप लोगोंके प्रतापसे आज वह दिन भी आया है कि, चित्तौड़ में शान्ति स्थापित हो गई और अब केवल एक काम बाकी रह गया है। वह यह है कि, कुमारका विवाह हो जावे।" सबों ने हार्दिक अभिलाषा प्रकट की। इतने ही में सिलीन राज्यके पुरोहितजी आ गये और एक सोनेके पात्रमें एक नारियल रखकर राणाजीके निकट बढ़े। राणाजीने एक हीरेकी अँगूठी उसमें डाल दी। इसके बाद कुमारके निकट गये। कुमारने भी पिताकी आज्ञानुसार उसे छू दिया। चारों ओर बाजे बजने लगे और पुष्प-वृष्टि होने लगी। पुरोहितजीने पुनः एक और नारियल राणाजी की आज्ञासे नारयणसिंहसे स्वीकृत कराया। राज-पुरोहितजीने विवाहका दिन ठीक कर दिया। सिलीन-राज्य-पुरोहित विदा हुए और चित्तौड़में प्रति दिन नवीन-नवीन आनन्द-मङ्गल होने लगे। ऐसा जान पड़ता था मानो चित्तौड़ दूसरी अमरावती हो गई है। भाट चारण मङ्गलमय गान गा गा पारितोषिक पाने लगे।

पाठक! ज़रा सिलीन राज्यकी ओर चलें और देखें क्या हो रहा है? बेचारी उमामोहिनी सर्वदा उदास रहती है; परन्तु जबसे सुना है कि, कुमारने युद्धमें बड़ी वीरतासे जयलाभ की है तबसे उसने कुछ धीरज धारण की है। आज उमामोहिनी

मालती दोनों स्नान-ध्यान से निश्चिन्त होकर बैठी हैं। इतने ही में एक लौंडीने आकर कहा कि, पुरोहितजी कुमारोका टीका ले लौट आये। तुरन्त ही तोप-ध्वनि हुई, जिससे यह निश्चय हो गया कि, कुमारीकी शादी चूड़ाजीके साथ ठीक हो गई। चारों ओर मङ्गलमय गीत होने लगे और बाजे बजने लगे। महाराज भीमसेनसिँहने आठ दिनके बाद तिलक भेज दिया और बड़ी धूमधामसे तिलक चढ़ाया गया। पाठकगण! हमारी निर्जीव लेखनीकी इतनी शक्ति नहीं कि, इतने बड़े राज्यके विवाह-आनन्द को लिख सकें। हमारा तुच्छ उपन्यास लगभग समाप्त ही होगया है। केवल बरातका हाल लिखकर हम अपने उपन्यासको परिशिष्ट करेंगे। चित्तौड़ सिलीन राज्यसे पाँच छः कोसकी दूरी पर है। सड़कें साफ कराई गईं, दोनों तरफ स्थान-स्थान पर मेहराबें लगाई गईं। दोनों राज्योंमें खूब तैयारियाँ हुईं। नियमित दिन शुभ मुहूर्त्तमें न्यौछावर हो, बरात चली। बरात का समारोह अकथनीय था। कोई घोड़ेपर, कोई हाथीपर, कोई पालकी पर जा रहे थे। उधर राजा भीमसेन भी बड़ी तैयारीमें थे। वे बरात को आती देख, अपने बन्धु-बान्धवोंके साथ अगवानी कर उसे जनवासे में ले गये। दोनों वर अपने-अपने जनवासे में लाये गये। राणाजी दोनों कुमारों की दो बरातोंका सब सामान अलग-अलग लाये थे और भीमसेनसिँहने भी वैसा ही सब ठीक कर रक्खा था। दोनों बरात द्वार-पूजाके बाद जनवासेमें उतरीं। शुभ लग्न में विवाह हुआ।

कन्यादान दोनों कन्याओंका महाराज भीमसेनसिंहने ही किया।

विवाह हो जानेके पश्चात; समस्त बरातका खान-पानसे यथोचित सम्मान कर, वे निश्चिन्त हुए। चार दिन इसी प्रकार बीत गये; परन्तु सब आनन्दमें इस प्रकार मग्न थे कि, दिन-रात बीतते मालूम भी नहीं होते थे। अन्तिम दिन भीमसेन सिंहजी कुमारको देवमन्दिरमें ले जानेके लिये—पुरोहित, ब्राह्मण-गण, परिजन और मित्रोंके साथ पूजाकी सामग्री साथ ले मांगलिक्य नृत्य, गीत और वाद्य श्रवण करते-करते चूड़ाजीको लानेके निमित्त चले। जनवासेमें जाकर कुमारको राणाजी के पास बैठा देखा। जल वर्षानेवाले काले बादलोंके ऊपर जैसे मनोहर दामिनी इन्द्रायुधादि शोभा पाते हैं; तैसे ही महाराणाजीके कृष्ण वर्ण पर आभूषण शोभा पाते हैं। भीम-सेनसिंहने महाराणाजीसे कुमारको जाने देनेकी बिनती की। राणाजीने प्रेमसे उन्हें अपने समीप बैठाया और कुमार वो नारायणसिंहको एकही रथपर बिठा देवमन्दिरकी ओर भेजा। वहाँ जा विधिपूर्व्वक पूजा कर वे लौट आये। अब विदाईका समय आ गया है। कुमारी विदा होगी, इससे भीमसेनसिंह कुछ विकल हैं। परन्तु तोभी प्रेमोद्गार रोक कर उन्होंने बड़ी धीरतासे दान-दहेज और अनेक दास-दासियाँ दे, कुमारीको विदा किया। बरात चित्तौड़की ओर चली। महाराज भीमसेन सिंहने रोकर राणाजीसे कहा कि, यह भी आपकी ही पुत्री

है, कहनेकी आवश्यकता नहीं। राणाजी इन्हें आश्वासन दे कर विदा हुए और उसी दिन चित्तौड़ पहुँच गये।

सब कर्म्म कुल-रीत्यानुसार निर्विघ्न समाप्त हुए और कुमार तथा नारायणसिँह महलमें पधारे। रानीजीने याचकोंको इतना धन दिया कि, वे अयाचक होगये। पाठक! उस प्रथम सम्मिलनका आनन्द मैं क्या वर्णन करूँ, आपलोग स्वयं समझ सकते हैं। समय पाकर दोंनों जनोंको पुत्र-पुत्रीका भी मुख परमेश्वरने दिखलाया। एक दिन रात्रिके समय कुमार बैठे थे और उनके निकट ही मालती और उमामोहिनी भी बैठी थीं। कुछ चुहलबाज़ी सी हो रही थी :—

कुमार—स्त्रियोंका विश्वास नहीं है।

मालती—ठीक है, मर्दों ही का विश्वास बहुत है कि, अपनी प्रतिज्ञा भूल जाया करते हैं।

कुमार—यह कैसे? ऐसे बहुत कम मनुष्य हैं। ख़ास कर हमलोग कदापि ऐसा नहीं कर सकते।

उमा०—यह हम कैसे जानें?

कुमार—जैसे तुम चाहो देख लो।

उमा०—(मालतीसे) सखी! उस दिन तुम थीं न, जब कुमार बँगलेमें हमसे प्रतिज्ञा कर गये थे कि, तुम्हारी अँगूठी हम किसीको न देंगे और किसी स्त्रीसे प्रेम नहीं करेंगे।

मालती—हाँ हाँ, अक्षरशः ठीक है।

कुमार—तो मैंने क्या अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दी है?

उमा०—सो मैं कैसे कहूँ ? मेरी अँगूठी मुझे मिले तो जानूँ ।

कुमारने अपनी अँगूठीकी ओर दृष्टि की तो स्मरण हुआ कि, वह तो उन्होंने अपने प्राणरक्षक मणिसिंहको दे दी है ।

उमा०—इसीसे मैं कहती हूँ कि, मर्दों का विश्वास नहीं । अच्छा, अब आप यह कहें कि मेरी अँगूठी किसी मर्दको दी या औरतको ?

कुमार—मर्दको ।

उमा०—मालती मर्द है या औरत ? क्या आप झूठ भी बोलते हैं ? कुमारने अब समझा कि ओह ! मालती ने ही मर्द बनकर हमको धोखा दिया था ।

उमा०—लाओ तो बहिन अँगूठी कहाँ है ? मालतीने अँगूठी तुरत ला दी । कुमारने देखते ही जान लिया कि, यह वही अँगूठी है । खूब हँसी हुई । अब कुमारको मालूम हो गया कि, मणिसिंह उर्फ मालती बीबी यही है, जिसने इतनी वीरताका काम कर हमलोगों की प्राण-रक्षा की थी ।

जनाबआली !
अगर आप अच्छी से अच्छी और हमेशा काम देनेवाली किताबों की खोज में हैं, तो आप नीचे लिखी हुई किताबें हज़ार तरह से रुपये बचाकर मँगावें ; ये पुस्तकें बाबा से लेकर पोतों तक के काम में आयेंगी :—
स्वास्थ्यरक्षा सजिल्द .... ३॥।)
चिकित्सा-चन्द्रोदय प्र० भा० ३॥।)
चिकित्सा-चन्द्रोदय दू० भा० ६)
कुल १३॥)
सूचना—एक साथ मँगाने से डाक-महसूल और पैकिंग का १॥।) माफ़ किया जायगा; यानी १३॥) में घर बैठे पहुँच जायँगी।
पता—हरिदास एण्ड कम्पनी,
कलकत्ता।